कविता

परिजात के फूल

भावनाओं की खुशबू से महकती कविताएँ

(मनसा-मोहनी)

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Mansa Mohini 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7310-674-8

Typesetting: Sagar

First Edition: October 2025

अनुक्रमाणिका

1. आजा हो आजा मेरे प्यार, ओशो - (गीत) 1
2. मेरा प्याला भी भरा हुआ था -(कविता) 3
3. जोगी तू क्यों आया मेरे द्वार — (कविता) 5
4. मन बहलाने से क्या होता है – (कविता) 7
5. लो मैं अँधेरे को मिटाने आ गया (कविता) 8
6. चट्टान-पुष्प-खग-देव तेरा रूप—(कविता) 10
7. ये तमस भरी मदहोशी - (कविता) 12
8. अमिताभ और उनकी–एकाकी पीड़ा (कविता) 13
9. आने बाली नसलों को (कविता) 15
10. उस पार नहीं मैं होना चाहता - (कविता) 17
11. जीवन का आधार बन गया — (कविता) 19
12. ओ री बांसुरिया – (कविता) 21
13. तुम एक दिन जरूर आओगे (कविता) 22
14. इक दीप जलाये बैठे है — (कविता) 24
15. बूढ़ा—बचपन (कविता) 25
16. ये प्रेम प्रीत अनमोल रे — (कविता) 28
17. वो न्यारी मतवाली पेंसिल (कविता) 29
18. कवियों को एक सुझाव (कविता) 30
19. नया सफर—(कविता) 32
20. जीवन बगिया ऐसी उलझी - (कविता) 34

21. तुम याद बहुत आते हो -- (कविता) 35
22. जीवन का सिंगार—(कविता)..36
23. धूल का कण (कविता) 38
24. बिना ध्यान जैसे जीवन सूना – (कविता) 41
25. कुरूपता और सौन्दर्य—(कविता) 42
26. होश के बस दो कदम—कविता 44
27. प्रेम एक मधुमास है -- (कविता) 47
28. हां मैं स्वार्थी हूं—(कविता) 48
29. सुखे पत्ते कहीं खड़ते - (कविता) 50
30. जीवन दर्पण—(कविता) 52
31. फिर पा लूं गा विस्तार आप सा -- कविता 54
32. जिन्दगी –(कविता) 56
33. जीवन का आधार बन गया — (कविता) 59
34. प्यार का नश्तर — (कविता) 61
35. पत्थर की पुकार - (कविता) 62
36. तड़प है परंतु दर्द कहां? - कविता 64
37. ज्योति विनिंदक रूप - (कविता) 66
38. देखा है जब से तुमको -- (कविता) 67
39. हां तुम विष कन्या नहीं हो? (कविता) 68
40. वृक्ष और पत्थर – (कविता) 70
41. अजनबी तुम अपने से लगते हो-(कविता) 72
42. आशा के पुष्प खिलाएगी—(कविता) 73
43. ओशो प्यारे दिल में समा रे 74
44. कुत्तों का आत्मसम्मान—(कविता) 75

45. अटल हो विश्वास जिसको—(कविता) 77
46. दिल की लगी को दिल ही जाने — (गीत) 79
47. नदी तीर (कविता) 81
48. कहां तक है रिसतों की दीवारें 84
49. किसको पकड़े किसको छोड़े 85
50. मां – केवल एक शब्द नहीं है (कविता) 86
51. कौन आधार—(कविता) 89
52. जीवेषणा—(कविता) 90
53. हां ! हमने गांधी को मार दिया—(कविता) 92
54. मधु से सुंदर मधुमास 95
55. भ्रम-चाप - (कविता) 96
56. गति हीन—शून्य - (कविता) 98
57. लूटने की आस है - कविता 99
58. अहंकार और भय - (कविता) 101
59. दूज का चाँद — (कविता) 103
60. दो में जल गया परवाना -- (कविता) 105
61. रात अंधेरी घिर आई फिर....कविता 106
62. साथी मिला है हमदम - (कविता) 107
63. चौहराया-बटवारे का (कविता) 108
64. ये प्रेम प्रीत अनमोल रे — कविता 112
65. हठीला कैक्टस - (कविता) 114
66. तु चला चल - (कविता) 116
67. सखी री सून प्रीतम रहा पुकार - (कविता) 117
68. बस चलना ही है जीवन लक्ष्य 119

69. टूट गया तू अपनी साख से — (कविता) 121
70. जब बरसता है माधुर्य तुम्हारा — (कविता) 123
71. बीज — (कविता) 125
72. नयन तुम्हारे सबसे प्यारे — (कविता) 126
73. एक प्रेम प्रीत कि पाती -- (कविता) 127
74. कौन अँधेरा तुम्हें जगाता — (कविता) 130

आजा हो आजा मेरे प्यार, ओशो - (गीत)

आजा हो आजा मेरे प्यार, ओशो...
सांसो का क्या एतबार आजा, ओशो
आजा हो आजा अबकी बार, ओशो ...।

जलती चीता पर जीवन बैठा।
कोई नहीं अब सब जग रूठा।
वादा करके तू हो गया झूठा।
गम भी तेरा लागे हे मीठा।
दिल को दिलाजा एतबार आजा....
आजा हो आजा मेरे प्यार....

कब की पुकारूँ पथ को संवारूँ।
तेरी छवि को बस बैठ निहारूँ।
घटती ये सांसे तुझ पर वारूँ।
लोक लाज अब आज उतारू।
तुझ बिन जीवन कैसे संवारूँ।
उत तू भी तो होगा बेकार आजा...
आजा हो आजा मेरे प्यार....

भाग मेरे जो तुझको पाया।
छोड़ जगत तुझे अपना बनाया।
मन मंदिर में अब तुझे बसाया।
आंगन भर खुशियां तू लाया।
सांसों में बस तू ही समाया।

सुर को मिला जा इस बार आजा...
आजा हो आजा मेरे प्यार आजा।

आओ प्रियतम अब तो आ जाओ।
भेद मेरा मुझसे न छुपाओ।
दिल ही दिल में पीर बढ़ाओ।
विरह गीत अब यूं न सुनाओ।
आकर अब तो भेद बताओ।
अहिल्या का करो उधार....आजा
आजा हो आजा मेरे प्यार ओशो।
सांसों का क्या है एतबार आजा।

मेरा प्याला भी भरा हुआ था -(कविता)

तुम जब आये मेरे द्वार, मैं मद-अहं से भरा हुआ था।
तेरे पदचापों की ध्वनि, सुन उसे अनसुना किया था।

डूबा सूरज हुआ अंधेरा,
चारों और तमस न घेरा,
करुणा करके तूने मुझपर
मंदिर में दें दिया बसेरा।
मद-मंदिर में छलक रही थी,
उत्सव-मस्ती महक रही थी,

प्याले सब के भरे हुए थे
भर-भर कर भी छलक रहे थे
मैं अपराध भाव सा लेकर
कोने-कातर में दुबक रहा था,
नयनों में अविरल आंसू थे
प्राणों में मधुर प्यास भरी थी
साँसे मेरी अटक रही थी
प्राणों को बस समेट रही थी
फिर कुछ तो घटा था मेरे अंदर
क्यों बार-बार कोई पुकार रहा था।
प्यार के अधीर तब मैं हो बेबस सी।
उत नीरस जीवन भी थिरक रहा है।
हर सांस में हर आस बनी थी।
क्यों तेरे आने कि आस जगी थी!

पल-क्षण में कुछ ऐसा घट गया
मेरे अंतस में कुछ नया डोल गया
आंखें मेरी बंद हो गई
दुनिया सारी पल में खो गई
भीतर झांक जब मैंने देखा
अंतस मेरा डोल रहा था
आनंद उत्सव कोई घोल रहा था
ये क्या मेरे अंतस में हो गया
पल भर पहले जो खाली था
मेरा प्याला भी भरा हुआ था
आनंद मदिरा से छलक रहा था
कैसा कौतुक ये घटित हो गया
चारों और थी प्रेम की वर्षा
अमृत उत्सव बरस रहा था
मद-मदिरालय लरज रहा था
ह्रदय सागर सा गरज रहा था
मेरे अंतस की प्रेम पखावज
आंसू बन कर के बह रही थी
मैं हर्षित उद्विग्नता सा होकर
बिन पंखों के उड़ा में चला था
ध्यान की गंगा बहा ले रही थी
मैं उसमें बह-डूब रहा था
ये कैसा कौतुक विस्मय सा हो गया
मेरा प्याला भी भरा हुआ था........

जोगी तू क्यों आया मेरे द्वार ? — (कविता)

जोगी तू क्यों आया मेरे द्वार ?
तेरी आंखों में नहीं दिखता, सपनों का अब वो संसार।
जोगी तू क्यों आया मेरे द्वार ?
सपनों के इन इंद्र धनुष से कितने रंग सजाए है।
तेरे रंग के   आगे जोगी सब बैरंग हो जाए है।
एक तरफ टूटे छंद मेरे थी एक तरफ आशाएं है।
जिनके पीछे दौड़ा रहा था, पाई वो छायाएं है।
छाया को क्यों तू माया सब कहता ?
भेद बता जा अब कि बार।
जागी तू क्यों आया मेरे द्वार ?.........

दीप सजाये बैठी कब से, तुम आकर उसे जलाओगे।
फूलों की बगिया से चुनकर, जीवन हार सजाओगे।
होली के नीरस रंगों में, तुम उत्सव रंग भर जाओगे।
काल कली के कोलाहल में, मधु रंग राग बजाओगे।
टूट चुकी अब नैया मेरी,
अब वो होगी कैसे पार ?
जोगी तू क्यों आया मेरे द्वार ?......,

मिटते-लुटते इस जीवन में, कोई संग नहीं, कोई राह नहीं।
धूमिल होती इस छाया का, कोई रूप नहीं आकार नहीं।
बिखरे जीवन के तारों में, कोई छंद नहीं, कोई राग नहीं।
आकार बनाऊं मैं क्या तेरा, अभी इतनी मुझमें जाग नहीं।
किन चेहरों में तुम को ढूंढूँ, कोई तो तुझसा रूप दाग नहीं।

है बुझती बाती, डूबी सांसे इन प्राणों में अब वो आग नहीं।
रूप के पीछे अरूप छुपा है,
क्या दर्शन होगा अब की बार?
जोगी तू क्यों आया मेरे द्वार ?.........

मर-मर कर भी नहीं मरे हम, ये क्या मिटना-मरना होता है।
इस धुँधली होती तेरी छवि को, मैं कहां देख अब पाता हूं।
हर रूप-कुरूप में तू ही बसा है, पर कहां पकड़ में आता है।
छाया की भांति तू तो जग में, नित आगे ही भागा जाता है।
अपने अंतस में जब भी देखा, बस उसको रिता ही पाता है।
जो दर्द के तारों को छूकर आये, वो गीत कहां बन पाता है।
किन कंठों से अब मैं गांऊ, जो गीत तुझे अब भाता है।
रोते-रोते थक गई आंखें,
दर्शन दे जा अब की बार।
जोगी तू क्यों आया मेरे द्वार ?.........

आस लगाती, सेज सजाती, फूल बिछाती हूं में रोज।
सूने पथ पर तुम आयेगा, तभी तो होगी जीवन मोज।
जीवन नैया डूब रही है, नित-नित बढ़ता जाता बोझ।
नहीं थकूंगा नहीं रुकूंगा,नित नये रूप धर लूंगा रोज।
मैं नाचूंगा और गाऊंगा, जब पैरो में   बांधूंगा सोज।
एक आस तो हर पल बहती रहती,
क्या उड़ेगा पंछी अब की बार ?

जोगी तू क्यों आया मेरे द्वारा ?....
तेरी आंखों में नहीं दिखता सपनों का अब वो संसार।।

मन बहलाने से क्या होता है – (कविता)

मन बहलाने से क्या होता है, मन के पार तो जाना है।
नई सुबह जो पास खड़ी है, उसे बढ़ कर गले लगाना है।
युगों-युगों के बाद है जग में, इस महा यान का आना है।
टूटे बिखरे इस जीवन पथ से, एक नई राह को पाना है।
चलना है एक राह पकड़ कर, बस नहीं भटक तू पायेगा।।
कुछ कांटों के लगने भर से, क्या राह भटक अब जाना है।
कौन यहां रहा है अजर-अमर, सब मिटता है सब बहता है।
इस जीवन लीला आगे जग में, वो खेल खिलाता रहता है।
नहीं दिखता, कहां छुपा है, फिर भी नित कोतुक करता है।
पल-छल नित-नित सब बदल रहा है, वो काम क्रीड़ा करता है।
कौन छलेगा, तुझको प्रीतम तू तो सब छलता है।
नहीं दिखता, कहीं कभी तू, कैसे तुझे इनकार करूँ।
रोज ही जीवन पनप रहा है कुछ कहते है रोज मरू।
तन-मन सब कुछ हे तेरा, मेरा तो कुछ भी पास नहीं।
पल भर जिसके साथ चले थे, कैसे मैं उसे अपना मानूँ।

लो मैं अँधेरे को मिटाने आ गया (कविता)

लो मैं अँधेरे को मिटाने आ गया।
गीत गा तुमको जगाने आ गया।।

थक गए अब है कदम चलते नहीं।
बादल दुखों के अब यूंहीं छटते नहीं।
फूल जीवन में कहीं खिलते नहीं।
बीज बंजर है पड़े उगते नहीं।
शूल पथ के मैं हटाने आ गया।
गीत गा तुमको जगाने आ गया....

हूं धरा पर पंख नभ के ले लिये।
कल्पनाओं में बहुत हम जी लिये।
कंठ अंगारों से भर-भर पी लिये।
पैबंद दुखों के देख हमने सी लिये।
देव धरा को मैं बनाने आ गया।
गीत गा तुमको जगाने आ गया।

हैं कठिन, जीवन नदी भी है विकट।
हाथ से पतवार को अब न यूं झटक।
दो कदम चल देख आगे बस है तट।
तूफ़ानों को देख कर न डर-सिमट।
घाट को तीर्थ बनाने आ गया।।
गीत गा तुमको जगाने आ गया।

प्रीत पथ है एक, पर राहे अनंत।
सिंधु तट से न बुझेगी ये जलन।
ध्यान मधुरस में है मीठी सी छुअन।
देख तुमको फिर पुकारें वो गगन।
राह फूलों से सजाने आ गया।
गीत गा तुमको जगाने आ गया।

हाय भरम है क्यों तुझे अभिमान का।
रह गया तुझको ये दंभ क्यों ज्ञान का।
रुला फिरेगा धूल में सर आन का।
बीता अगर कल काल है पहचान का।
यहां कौन मिलता फिर तेरी पहचान का।
दीप पथ पर हूं जलाने आ गया।
गीत गा तुमको जगाने आ गया।।

अपना होना ही है होना एक बस।
सूखे फूलों में भी कहीं होता है रस।
जान ले तू मौन मदिरा का कलस।
उसी से बूझेगी देख जीवन की झुलस।

होश अमरत्व का पिलाने आ गया।
मैं अधरों को मिटाने आ गया।
गीत गा तुमको जगाने आ गया।।

चट्टान-पुष्प-खग-देव तेरा रूप—(कविता)

ऐ चट्टान तेरा ये एकांकी पन
कितना निष्ठुर ओर शुष्क है।
कैसा बेजान निर्जीव सा दिखता है
परंतु तुझमें भी जीवन स्पन्दन बहता है
फैली है जीवेष्णा किसी तुझमें भी
लिये पूर्णता को अपने में समेटे
तेरा विकास काल अजय है
अटल है तेरी थिरता,
और अमिट है तेरी धिराता,
कैसा साधु वाद लिए हुए रहत है
तेरा वो अकार-रहित आकार
अडिग खड़ी सुहासती-दमकती है
तेरी निरंकुश वो सुंदरता

फिर देखो उस पुष्प को,
जो नाचता है इतराता है
खिंचता है अपनी और सबको
किसी आ पूर्व गंध ओर रंग से लवरेज होकर
कैसी मदहोशी भरी होती है उसके आस-पास
पुष्प का इठलाना, उसका इतराना।
उसका छूता सौंदर्य, सब को भाता है
सब को हर्षित करता है
किसी अनजान अनजाने को भी
देता है कैसी तृप्ति, की छांव वो सबको

और रस गंध भी।

फिर देख उस खग को,
जो उड़ जाता नभ की उतुंग उंचाई तक
उसका कलोल कोरस गान,
भिन्नता में मधुरता समेटे रहता है
कैसा दिग दृश्य होता है वह नभ में
उसकी चपलता, चुहल-चंचलता
उसकी अठखेलियां कैसी नभ

उसकी उत्तुंग मोहती है मन को
मन थिरक उठता है मदमस्त मदिरालय सा
उसके कोकिला गान तानों से
झूमा जाती है ये धरा भी पल भर को।

हे देव,
ये तेरा अनेक-में एक रूप
भिन्नता में अभिन्नता
निराकार में साकार का
कैसा भेद है.....
समेटे आपने में एक अज्ञता।
कैसे परिचित होना है उस अज्ञेय से।
अब मैं सब भूल गया हूं
वो क्या शायद अब मैं कहां
खुद को ढूंढ रहा हूं....पर पाता नहीं।

ये तमस भरी मदहोशी - (कविता)

ये तमस भरी मदहोशी, ये जाग भरी उन्मादी।
पास खड़े जब दोनों, क्यों पी लूं न आधी-आधी।

जब नयनों में तू बसता, जग लागे हंसता-हंसता।
जब ह्रदय में तू आता, जीवन उत्सव बन जाता।

मन-मंदिर का भी चौका, अब लागे रीता-रीता।
कोई दूर पपीहा गाता, वो मेरी कथा सुनाता।
शबनम की ये चंद बुंदे, मेरे ही आंसू लाता।
मधुर याद में खोई, कोई क्यों सपनों से जगता।
कितना ही भर लूं ये मन,नित रिता होता जाता।
ये तमस भरी मदहोशी, ये जाग भरी उन्मादी।।

रातों के काले शाये, दीपक का विरह बताता।
जलती शम्मा पर आकर, परवाना ही जल जाता।
नयनों की भाषा कोई, शब्दों में कैसे समझाता।
किन छवियों को में पकडू तू धूमिल करता जाता।
हूं साज सजाये बैठी, फिर वो-ही राग सूना जा।
ये तमस भरी मदहोशी, ये जाग भरी उन्मादी।

अमिताभ और उनकी—एकाकी पीड़ा (कविता)

हे अविचल, अटल दृढ़, संकल्प तेरा।
आलोक मय दैदीप्यमान तेज न घेरा।।

क्या बादलों की गड़गड़ाहट, से तू सहम जायेगा।
क्या रात्रि की तड़पन, में भय क्रांत खड़ा होगा,
एक कोने में सुकड़ सहम, कर तू विलीन होगा,
या अविरल तम से,
गुथेगा इक हार,
कुछ मधुर प्यार,
और फिर सिंगार,
वही देगा सांसों का नया हार,
खुल जायेगा देख इक नया द्वार
जीवन में बह उठेगी एक धार।
एक स्वेत बिंदु, बुझ-बुझ के, तुझे निहारता सा दिखता रहेगा,
छल-छल, पल-पल। तेरी विरसता का,
करता है लगता है वह अट्टहास,
है क्या तुझको इसका कोई अहसास।
जीवन में जब तुम उथले बनो,
मारना गोता, उसी निश्छलता में।
पल भर को।
एक नवनीत की,
सुगंध तुम्हें घेर लेगी,
पल-पल को भोगो।
जागो ओर केवल जागो।

हर उस पल को पी लो।
जो बह रहा है तुमसे
उसमें फिर हो विष, या अमृत,
तभी तो तुम बनोगे वहीं अभेद्य,
और देखना बन जाओगे क्षण भर में।
फिर वहीं, वहीं नवनीत,
तुम्हारी ‘’एकाकी पीडा’’
है तुम्हारी मंजिल डगर......पुकार रही होगी।
निहार रही होगी.....बुहार रही होगी वो पथ।
जो बने शायद इक दिन तुम्हारी मंजिल।
नहीं तो फिर वहीं तुम और तुम्हारी एकाकी पीड़ा।

आने बाली नसलों को (कविता)

(26/11 के वीरों शहीदों के नाम)

कुदरत के इस अनमोल खजाने से,
आने वाली नसलों को हम क्या देंगे।
एक टूटते धर्म की ज़र-ज़र होती जंजीरें,
या देश के नाम पर, टूटी-फूटी लकीरे।
वो तो समेटना चाहता है, सीने में,
समुन्दर की विशालता को।
उसके अरमान हिमालय से भी, ऊंचे हो शायद।
फिर क्यों हम हवाओं में, नफ़रत का जहर भर रहे है,
जिन अंजान-अपरिचित लोगों का खून बहाया जा है।
क्या तुम उन्हें जानते हो....है न नहीं जानते।
फिर क्यों नफरत है उनसे तुम्हें।
मात्र एक झूठा धर्म का, झूठा चशमा पहन कर
देखने के कारण।
जो तुम्हें जन्नत में जाने का मार्ग बता रहे है।
क्या वो धर्म का राज जानते है? नहीं।
क्या जिसे मार कर तुम जन्नत का मार्ग बना रहे हो
उन्हें जीने का कोई हक, क्या वो जीवन तुमने दिया नहीं। नहीं है अब।
तब तुम्हें लेने का हक किस परमात्मा के बंदे ने दिया।
वो खुद तो यहां नर्क में धर्म का प्रचार कर रहे है
और तुम्हें जन्नत में भेज रहे है।
क्या प्रेम नहीं है हमारे पास, मौत ही देने को है हमारे पास,
एक मरघट सा सूनापन, एक धुंध के कुहासे की चादर,

एक मिटती हुई जीवन की तस्वीर।
वो एक मां की कोमल आंखें देखेगी कैसे ये मंजर,
वो नाजुक हथेलियां,
इन खून से भरी दीवारों को छूकर,
जब पूछेगी कुछ सवाल हमसे,
कब, क्यों और कैसे?
क्या यहीं वसीयत लिखी है हमने,
इन उठती हुई आ-जानो में, ये नासूर,
फफकते हुए काले साये,
कैसे सुकडे रहे है,
इस अहं की फैली चादर को,
ये मुल्ला, पंडित, पोप मौलवी,
तुम्हें नहीं दे सकेंगे कोई उत्तर।
कहां ढूंढते है हम उत्तर, नफरत के कुहासों में।
फिर वो स्फटिक-निश्चल आंखें, केवल बंद कर लेगी,
कैसे करोगे तुम उनका सामना।
वो फैली हुई बाहे, जड़ बन कर सिमट जाएंगी,
उसकी वो मूक वाणी,
सिसकियाँ नहीं बनेगी,
पहले ही घूँट जाएगी।
और फिर छलक जायेगा
वो दूध खून बन कर इस धरा पर।
परंतु नहीं बुझेगी प्यास....तुम्हारी फिर भी।
रुको और ठहरो।
झांको अपने अंतस में एक बार।
बस ही है उत्तर केवल होने का।

उस पार नहीं मैं होना चाहता – (कविता)

उस पार नहीं मैं होना चाहता, मझधार बना कुछ रहने दो।
प्रियतम टूटे इन तारों से, कोई राग बजा कुछ रहने दो।
घुलमिल होती छाया का आकार बना कुछ रहने दो।
टूटे-बिखरे इन सपनों का संसार बना कुछ रहे दो।

पथ शूलों से भरा हुआ है, फैला चारों और ही कोहरा है।
नहीं सूझती डगर किधर की, मन सपनों ने घेरा है।
जुगनू की किरणों को हमने, समझा   हुआ सवेरा है।
मेरा-मेरा कहते थे जिनको, कहां हुए वो मेरा है।
मत बतलाओ मंजिल मेरी, भ्रम बना कुछ रहने दो।.........
प्रियतम टूटे तारों से.......

जितना हंसती जग के आगे, भीतर उतना ही रोती हूं।
आती जाती साँसों को गिनकर, जीवन खोती रहती हूं।
तुम आओगे सुने इस पथ पर, बैठ किनारे रो लेती हूं।
आंखें थकी,थक गया जीवन, निष्प्राण तड़पती रहती हूं।
मत शाहलाओं इस पीड़ा को, दर्द बना कुछ रहने दो....
प्रियतम टूटे तारों से.......

बसंत फैलता जब उपवन में, मैं केवल रो लेती हूं।
तेरी यादों की टीसो को, मर-मर कर जी लेती हूं।
जग की पीड़ा को में यूं ही,हंस-हंस कर पी लेती हूं।
फटे पुराने मन के पैबंद, रह-रह कर सी लेती हूं।
आस बची ना इस जीवन की, विश्वास बना कुछ रहने दो..
प्रियतम टूटे तारों से.....

दीप जलाये सुने पथ पर, इक आस जगाये बैठी हूं।
मुझे पता तुम नहीं आओगे, पथ शूल हटाती रहती हूं।
दूर कहीं जब पपीहा गाता, बस अधरों को सी लेती हूं।
जीवन के इन लघु क्षणों को, पल-युग सा जी लेती हूं।
कहीं तो होगा कोई किनारा, बस घाट बना कुछ रहने दो...
प्रियतम टूटे तारों से......

पक्षी जागे, जागा जीवन, यूं कब तक मुझको सोना है।
कितना क्यों न पा ले ये मन, बस इसको तो रोना है।।
दाग लगे जो इस दामन पर, कितना उसको धोना है।
दुःख-पीड़ा के इन बीजों से, बिछना नया बिछौना है।।
आँख के आंसू मोती बन गये, बस हार पिरोते रहने दो......
उस पार नहीं मैं होना चाहता, मझधार बना कुछ रहने दो।
प्रियतम टूटे इन तारों से, कोई राग बजा कुछ रहने दो।

जीवन का आधार बन गया — (कविता)

कोई कल था जो अपरिचित सा..
वो जीवन का आधार बन गया।
बांध रही एकाकी मन को..
यादों की जंजीर सुनहली,
निंदयारी पलकों ने खोई..
सपनों की जागीर रुपहली;
रोम-रोम पर एक अनजानी,
मीठी-सी सिहरन का पहरा,
दृष्टि-परिधि में भी न रहा जो..
सांसों का आगार बन गया।
कोई कल था जो अपरिचित सा।
वो जीवन का आधार बन गया।

आश्वासन के शब्द-पखेरू..
वचनों की शाकों पर चहके,
अभिलाषा के कमल वनों में..
सुरभित धीरज पद-पद महके;
उग आए हैं बोल प्यार के,
भोले-भोले प्रणय-अजिर में;
नाम किसी का अनजाने ही..
गीतों का आभार बन गया।
कोई कल था जो अपरिचित सा।
जीवन का आधार बन गया।

अंतर के दर्पण में मैंने..
ज्योति-विनिंदक रूप उतारा,
पर असीम को सीमित करना..
सहज नहीं इससे मैं हारा;
निर्वसन, असफल रेखाएं,
हाथ उठा कर गगन निहारें;
चित्र किसी का प्राण अजाने..
मेरा ही आकार बन गया!...
कोई कल था जो अपरिचित सा..
जीवन का आधार बन गया।

ओ री बांसुरियाँ – (कविता)

ओ री बांसुरियां जब होंठों से मेरे लग जाती हो
ह्रदय में उठी टीस को जग को कह सुनाती हो।

कभी मन का मोदक नाद गाती हो।
कभी हंसाती हो,कभी तुम रुलाती हो।
मत गा-मत गा वो गीत, अब रोता है सावन।
दूर कहीं चेन से सोता है प्रीतम मन भावन।
मेरा राग मेध तू लेजा, उन चरणों में जाकर गहजा।
थोड़े से आंसू दे जा, थोड़ा सा गम मुझे से ले जा।
जा के प्रीतम से कह दे, मुझे याद तेरी रुलाती है।
ओ री बांसुरियां जब होंठों से मेरे लग जाती हो
ह्रदय में उठी टीस को जग को कह सुनाती हो।

राग जिसे तुम कहते हो, मेरे ह्रदय की तरुणाई है।
ये सूर जो बहते छेदो से, मेरे तन की अंगड़ाई है।
है मेरे प्राणों का क्रंदन जो, खरज़ कहां लग पाई है।
जब छूती है ताल तन को, मानो पुरवा बहआई है।
यू पोर-पोर सहलने से, मैं फिर जीवित हो जाती हूं।

ओ री बांसुरियां जब होंठों से मेरे लग जाती हो
ह्रदय में उठी टीस को जग को कह सुनाती हो।

तुम एक दिन जरूर आओगे (कविता)

जब भी कोई कहीं पुकारता है।
मुझे लगता है तुम आ गए।
तब क्यों मैं सहम-सुकड़ कर,
भयभीत सी खड़ी रह जाती हूं।
किसी छोटे बच्चे कि तरह,
तब मैं झांक कर देखता हूं
मन के दरवाज़े के छेद से,
और फिर बंद कर लेता हूं अपनी आंखें,
सोचता हूं अच्छा हुआ तुम नहीं आए?
अगर तुम मेरे पुकारने से आ गए होते तो
फिर मैं तुमसे से कहां छिप सकती थी।
शायद कहीं भी वो जगह मुझे नहीं मिलती
फिर भी ढूँढता है तुझे ही ये पागल मेरे मन
घर आंगन के हर एक कोने-कोने में,
कि तुम आओ और मैं छुप जाऊं
परंतु तुम मुझे न ढूंढ सको
या कहीं ऐसी जगह मुझे मिल जाये
जहां मैं फिर छुप सकूँ बचपन की तरह
शायद फिर रूक जाये ये समय पल भर के लिए
उस बचपन की मासूम घड़ी की तरह बंध कर
जहां खेलती थी मैं मां के साथ छुप्पा-छुप्पी,
खेलते-खेलते जब मैं छुप जाती थी कहीं भी।
जहां मां मुझे जानते हुए भी,
न जानने का भ्रम दिखलाती थी !

कि मैंने तो तुम्हें देखा ही नहीं
शायद किसी मीठे भ्रम में रखने के लिए
लेकिन तेरी आंखें तो भेद देगी मेरे अंतस को,
मेरे द्वेष, अहंकार, छल कपट से भर ह्रदय को,
तब मैं सिहर जाती हूं, लरजते पीपल पात की तरह।
और मैं जब देखती हूं तुम नहीं आये,
चैन की एक गहरी उसांस भर लेती हूं,
और जब कहीं दूर देखती हूं आपन चारों और,
आह! कि मैं अब भी हूं, एक सुखद खुशी
पल भर के लिए घेर लेती है मेरे होने को
और तब मन करता है,
करूं फिर वो ही शरारत कोई बाल हठ सी,
भागूं दोडुं रोऊं इस धूल-धमास से लिपट कर।
पर न जान क्यों केवल छुप-छुप कर ही रो पाती हूं।
फिर भी न जाने क्यों करती हूं,
केवल तुम्हारा ही इंतजार,
तुम तो हो पूर्ण समस्वरता समेटे अपने में
तुम जान जाओगे मेरे अंतस की प्यार को
मैं ये भी जानती हूं,
तब एक दिन तुम जरूर आओगे,
शायद तुम्हीं आकर,
मेरे दामन पे लगे,
इस कृतघ्नता के,
दाग को मिटाओगे।

इक दीप जलाये बैठे है — (कविता)

इक दीप जलाए बैठे है, इक आस लगाए बैठे है।
हम दिल के टूटे तारों से,कोई गीत बनाए बैठे है।

कोई आस बंधी थी जीवन की,आती-जाती श्वास भी थी।
जो महक उठी थी प्राणों में, खोया हुआ एहसास सी थी।
वो दूर भले ही रहते थी, पर रहती दिल के पास ही थी।
जो आकर जाती थी न कभी, वो अनबूझी प्यास सी थी।
वो आ न सके, हम रो न सके, पर आस लगाए बैठे है,
बस आस यही विश्वास यही ये श्वास नहीं टूटे तब तक।
वो आ न सके हम मर न सके, हम पलक बिछाए बैठे है।

तुम तो कब का भूले गए, ये हिचकी क्यों आती है हमें।
जीवन के सूने आंगन में, गा कोयल क्यों तड़पाती है हमें।
कभी छूती हे वो यादों तेरी, क्यों दर्द सिहरन भरती हमें।
नासूर बन गया है दर्द तेरा, पर हम जख्म सजाए बैठे है।
आंखों के आंसू सूख गये,
सपने भी हमसे सब रूठ गये,
सूनी आंखें के पलकों पर
हम सपने सजाए बैठे है..।
इक दीप जलाए बैठे है, इक आस जगाए बैठे है।
हम दिल के टूटे तारों से, कोई गीत बनाए बैठे है।

बूढ़ा—बचपन (कविता)

जब मैं थक जाता चलते-चलते।
और देखता उसी रास्ते को,
कोमलता से हंसते-मुस्कराते हुए।
उस चिर-परिचित से उस थिर पत्थर को
जो शायद करता सा दिखता था
हमेशा से मेरा ही आने का इंतजार
जब मैं चलते-चलते थक हार कर,
बैठ जाता कुछ पल उसके अंग-संग
वह कैसी शीतलता सी भर देता था
मेरे थके तन मन को, पल भर में ही।

जब भी मैं वहां से गुजरता
वो मुझे अपनी और रिझाता
खिंचता कुछ इशारा सा कर
मानो बुला रहा है उसका मूक गान।
किस तन्मयता से करता रहता था
वह नित ही इंतजार है मेरा?
उसके आस पास हमेशा
आह्लादित सुवास बहती थी
बिखेरी रहती थी एक मीठी हंसी
उसके निर्बोध मुख मंडल पर,
किस नरम इशारे से लुभाता।
जब भी मैं उस के पास जाता
तो वो भर देता एक नई ताजगी मुझमें,

हर लेता था मेरी सारी पीड़ा और संताप को।
और फैल जाता था मेरी रोएं-रेशे में।
आह्लादित, हर्ष, उत्साह, उमंग, का रस।
लेकिन न जाने क्यों मुझे लगता है।
वो मुझे अब तिरछी नजरों से
न जाने क्यों घूर-घूर कर देखता है,
उसकी क्रूर-भेदती पत्थर की आंखें।
कुछ हठी से हो गई है...थी।
खो गई थी उसकी तरलता कहीं
फिर भी मुझे लगता था
नहीं मुझे उसके पास जाना चाहिए।
उस पर बैठ कर कुछ सुनने के उसके दर्द गीत को,
और कुछ सुनाऊं अपने मन की पीड़ा को।
हाय वो दिन भी कैसे पंख से लगते है
कैसे जब भी बचपन में आता था,
पापा जी का हाथ पकड़ उनके साथ।
कैसे हर्षित सा भाग कर चढ़ जाता उसपर।
तब इसी पत्थर पर खड़ा हो कर
मैं इतराता और अपने को महान समझता था।
कहता, देखो मैं कितना बड़ा हो गया।
नापता आपने आप को पापा से।
मैं बस जल्दी से उन से बड़ा हो जाना चाहता था।
इस बात पर पापा धीमे से हंसते थे,
एक मधुर मोदन व्यंगात्मक हंसी,
परंतु उसे समय मैं नहीं समझ पाता था।
पापा की उस मोदक हंसी को
और कैसे तालियां बजा-बजा कर,
अपने बड़ा होने पर गर्व दिखलाता था।
बार-बार करता विजय का उद्घोष।

तब भी ये पत्थर मुझे घूरता था।
एक अचरज भरी नजर से देखकर।
वह कुछ कहना भी चाहता था।
और वह आज भी वैसे ही देखता है मुझे
आज भी वैसा ही करता है अट्टहास,
पुछता सा लगता है मुझसे हो गए बड़े।
क्या पाया अब बड़ा हो कर?
थक-हारकर, इस जीवन से।
और मैं गर्दन झुकाये, मायूस, हताश सा।
भारी बोझिल तन-मन से लोट पड़ता हूं घर की और।
नहीं देखता उस पत्थर को पीछे मुड़ कर।
कहीं वो पुकार न मुझको फिर से।
तनिक रुको, करो विश्राम,
नहीं अब में उस पर चढ़ कर
और बढ़ा नहीं होना चाहता।
मैंने खो दिया बचपन अपना,
बुढ़ापे को भी नहीं खोना चाहता।
शायद उससे दूर घर के किसी अंधेरे कोने में,
छुपे बैठे उस अबोध बचपन को समेट लूं,
ओर नया बन चहक उठे मेरा बूढ़ा-बचपन,
और मैं तेज कदमों से चल देता हूं
घर की और, अपने खोए बचपन को पाने के लिए
जो समा जाये मेरे में फिर मुझमें एक बार।
कैसा सूखा सन्नाटा फेल जाता है उस क्षण
और मैं अवाक अबोध बाल वत सा बू ढापे
को निहार रहा होता हूं।

ये प्रेम प्रीत अनमोल रे — (कविता)

इस उम्र के ढलते मोड़ पर,ये प्रेम प्रीत अनमोल रे।
यह पूजा है, यहीं भक्ति है, ये आनंद है बे-तोल रे।

परम सुखद है जीवन उसका, जो इन तूफानों में डूबा।
न दर्पण है, न अर्पण है, ये रास्ता है जग से अबूझा।
थके कदम थे, थी राह कठिन जब, जीवन उर्जा ने उसे ढूंढा।
प्रीत में शीतलता है बसती, इस किसी तराजू से न तोल रे।।

द्वार खुले जब मधुर नाद से, प्रेम की गागर पूरा भर गई।
सुप्त पड़ी थी प्रेम की गंगा, गो-मुख बन वो जीवित हो गई।
तुझे निहारूँ, तुझे पुकारूँ, तेरी आहट मेरी धड़कन बन गई।
जीवन को रंगीला बन कर, जीवन को तुम पूरा रंग गई।
शब्द नहीं अब लब पर आते, न किन्हीं गीत के बोल रे।।

सांसों का स्पंदन तू ही बन गई, वीरानों को उपवन कर गई।
प्रेम-प्रीत की एक बूंद से, ह्रदय का सागर तुम भर गई।
मधुर बोल कोकिला बनकर, जीवन को गीतों सा रच गई।
पल-पल ऐसा जीवन हो गया, पैरो को तू मृदंग दे गई।
साज-साज पर, ताल-ताल पर, राग बने अनमोल रे।
इस उम्र के ढलते मोड़ पर,ये प्रेम प्रीत अनमोल रे।
यह पूजा है, यहीं भक्ति है, ये आनंद है बे-तोल रे।

वो न्यारी मतवाली पेंसिल (कविता)

कविता जब श्याम-सलोने रंग में उतरती।
कैसे दिखती सुकन्या सी कोमल क्वाँरी।
उस का तन कितना चिकना और मरमरी बन जाता,
कैसे छुई मुई सी निरखती।
जब वह चलती है तो कैसी यौवन की
अँगड़ाई लेती सी लगती है।
उसका वो स्वरूप कैसा स्फटिक गौरवमय झाँक रहा होता है,
संगमरमर सी बन कैसे एक ताज महल सी खड़ी इतराती है।
और चलती, या शायद वो कैसे मचलती लगती है,
इतराती, इठलाती, दिखती भी मुस्कराती मन को भाती है।
कैसी नव यौवन सी है भाषित,
न थकती,
न रुकती,
मानो है वो कोई नृत्यांगना,
रूनक–झनक गूँजती उसकी पायल।
और फिर कभी शरमाती,
मुंह में उँगली दबाए देखती,
देखती कजरारी आंखों से
और में भूल जाता सारी दुनिया,
कुछ क्षण के लिए डूब जाता उनमें।
वो न्यारी मतवाली....पेन्सिल ।।

कवियों को एक सुझाव (कविता)

वो लिखते थे कविता पेन्सिल से।
छिल कर रखते थे,
तीन-चार सहेलियाँ एक साथ।
फिर बाद में उन्हें एक-एक कर के अपनी
नाज़ुक उंगलियों से उठते थे,
कैसे उनकी ये नजाकत एक सुंदर कविता का
रूप ले लेती थी।
दूसरी और कठोर से दिखने वाले पेन,
और कहां ये महीन नाज़ुक पेन्सिल
क्या मेल है दोनों का
वो पेन जो दिखता ढीठ एक पुरुष की तरह।
थी उसमें कितनी हेकड़ी और अकड़।
साफ दिखाई देता था
एक छुपा अहंकार उसके चेहरे पर
एक क्षत्री की तरह, था वो निडर,
वीर और, वो धीर भी।
छोड़ दिया उस निडर का साथ
जो अडिग था अमिट था
फिर मैं भी करने लगा अमल,
चुना एक नया मार्ग
जो बनाता था एक सुकोमल मार्ग
एक अनछुई सी डगर
जिसे राज मार्ग नहीं कहां जा सकता
फिर लिखने लगा उस कोमल सी पेन्सिल से,
मैंने किया संकल्प, सच ही कहता हूं।

अब शब्दों में एक लय थी
एक कोमलता थी, एक सरला
एक लय, एक छंद एक नजाकत
और एक समस्वरता थी।
जो हठीली बिलकुल नहीं थी।
चल पड़ा शब्दों का एक नया खेल
रचना का खिलने लगा कमल
वो बनती सी दिखती थी सुकोमल,
कभी वह कुछ हो जाती चंचल,
और देखने से ही लगता था
उसका खिलता सा उसका चितवन,
और छू जाती उसमें
निर्झर सी अपूर्णता,
पूर्ण होता उसका देवत्व भाव।

नया सफर—(कविता)

श्याम के अस्त सूर्य की लालिमा में,
उड़ती गाड़ियों की धुल-दूषित रजत कण,
कुछ क्षणों के लिए ले लेते है वो
वो भिन्न-भिन्न से आकार,
शायद वो हो मेरे मन का ही वहम
एक जंजाल जो एक प्रति छवि बन
खड़ा हो जाता था मेरे ही सामने
कभी-कभी उसमें झाँकती सी लगती है,
मां की छवि मुझको,
तब मेरा बाल मन कैसे जीवित हो उठता था
तब में कुलांचें भर दौड़ पड़ता हूं,
उसे पाने के लिए, पकड़ने के लिए
परंतु जैसे ही जाता हूं उसके पास
वो तो एक बन कर घेर लेता है मुझे
एक गुब्बार का बादल बन
वो मृग मरीचिका बन
करती है अट्टहास,
और मैं अवाक-छला सा
रोक लेता हूं अपनी सांस
कहीं तुम मेरी तेज सांसों से
बदल न लो अपना आकार,
चारों तरफ गहन शांति,
रास्ते के उस पतले होते
छोर तक नहीं दिखता कोई आकर,

दूर क्षितिज पर लालिमा भी
रूठ कर चली जाती है सूर्य के संग,
और मैं खड़ा हूं,
उस पगडंडी पर टिकाये नजर,
धुल का गुब्बार भी धीरे-धीरे
खो जाता है बन काला साया
और पड़ जाती है मंद जीवन ज्योति
खत्म हो जाती है इन आंखों कि रोशनी
और में चल देता हूं एक नए सफर पर,
अदृश्य पथ पर, बिना किसी कलेवे के।
बिना आंखों कि ज्योति के
बिना किसी पूर्व नियोजित
अनजान अपरिचित गंतव्य की और ....।

जीवन बगिया ऐसी उलझी - (कविता)

जीवन बगिया ऐसी उलझी, फूल उगे कम कांटे ज्यादा।
सिमटा जीवन डूबी सांसे, आना है तो अब भी आजा।

गीत हवाओं ने जब-जब गाए, मेरे प्रीतम तुम नहीं आये।
दूर कहीं जब घिरी घटाये, तेरी जुल्फों का है धोखा खाये।
सांसों की तानों को सून-सून, मैंने कितने ही गीत बनाये।
आस लगाये पलकें बिछाये, खड़ी हूं कब से तुम न आये।
बीज खुशी के जब-जब बोए, फूल विरह के खिलते पाये।
आने वाले अब तो आजा, सुने साजों में फिर राग जगा जा।।
जीवन बगिया ऐसी उलझी फूल उगे कम कांटे ज्यादा।

तार विरह का दिल में बजाता, वो तो बन बैठा इकतारा।
हार-हार कर नहीं हारता, मन तो बेबस कितना लाचारा।
दूर कहीं जब पपीहा गाता, न मैं सोती ना वो बेचारा।
दूख पीड़ा को दूर करूं क्यों, वो तो लागे तुझसे प्यारा।
नाम पता सब भुल गये अब, लेते केवल नाम तुम्हारा।
भोर का तारा डूब रहा है, टूट रही अब तो जीवन धारा।
आंख मेरी तो खुली मिलेगी, मरने पर भी चाहे आजा।
जीवन बगिया ऐसी उलझी, फूल उगे कम कांटे ज्यादा।

तुम याद बहुत आते हो -- (कविता)

तुम याद बहुत आते हो,
खाली जीवन के कोने में
जब तेरी याद का झोंका आ कर।
कोई मधुरस-रस भर जाता,
सूने पड़े दिल के उस आँगन में,
कैसा अपना पन छा जाता था।
तेरी बातों की, वो गुंज अभी-भी
हर ओर जहां भी पाती ।
तेरी सांसों की वो महक अभी भी
मेरे दिल को बहुत सताती।
दिल रोता है...न सोता है....जीवन बस खोता सा लगता।

टूटे बिखरे उन सपनों को
क्या तुम फिर से जीवित कर दोगी।
प्यास बुझेगी इस जीवन की
एक यहीं तो आस बची है।
तुम न कहना की भूल चूके हम
इस आस पर आंखें अब भी
देख रही है उस सूने पथ को
यादों का इक झोंका बन कर तुम फिर जीवित कर जाते हो।
तुम याद बहुत आते हो।...यादों के तार कोई मधुर गीत गा जाते है।

जीवन का सिंगार—(कविता)

कुछ अंबर की बात करें, कुछ धरती का साथ धरे।
कुछ तारों की गूथे माला,फिर जीवन का सिंगार करें।

उलझे सपनों की रुनक-झुनक, तारा मंडल की अभिलाषा सी।
और मौन थिरकते शब्दों को, पढ़ने की है अस्मिता सी।
ये जीवन के बंधन सारे, अब घुटन भरे सब लगते है।
किन्हीं आड़ी तिरछी रेखाओं की, उलझी उस भाषा सी।
क्या अपनी आशाओं को कह दूं,
अब और नया कोई ठौर धरे।
कुछ तारों की गूथे माला,
फिर जीवन का सिंगार करें.....

कुछ होना है, कुछ बनना है, यह जीवन बस यूं खोना है।
है अथक थकाती ये लहरे, बस मुट्ठी भर बालू होना है।
सपने-सपनों को नोच रहे, न पाना है, ने कुछ खोना है।
बस आहों की ठंडी सेज पर,टीस का बिछा बिछौना है।
जीवन की छूटती इस नैया का सत्कार करें, सम्मान करें।
कुछ तारों की बात करें,
फिर जीवन का सिंगार करें।।

सहमे रातों के साये से, ना डर कर भागों बस थिर हो लो।
थम जाओ अ-मन मन कर लो, बन अंगद का तुम पग धर लो।
है शौर्य ध्यान का ध्वज फहरा, इस कुरुक्षेत्र को विजय कर लो
फिर शान्त मुकुट मंदिर बन कर, स्वतंत्रता के नये द्वार खोलो।
सायों की कालिक छानें तक, पथ-पाथे पर कुछ ध्यान धरे।
कुछ तारों की गूथे माला,
फिर जीवन का सिंगार करें।।

कुछ कहने को चुप कानों में, कोई आकर हमें जगाते है।
हम पलकें केवल मल लेते है, और करवट ले सो जाते है।
उस शूल को भी फूल समझ, जीवन को छिदते जाते है।
इक आस के पंछी बैठ कही, मधुर सपनों के राग सुनाते है।
गोधूलि बन मिट्टी पल-पल, कुछ हास करें परिहास करें।
कुछ अंबर की बात करें, कुछ धरती का साथ धरे।
कुछ तारों की गूथे माला,
फिर जीवन का सिंगार करें।

धूल का कण (कविता)

धुल का कण सरक कर परों के तले,
उसका धीरता से यूं सिमटना, सुकड़ना और नाचना।
फिर खिल-खिला कर करना उसका यूं अट्टहास,
मैं सोचता हूं,...
क्यों नहीं आता उसको अहं से उठना।
क्या नहीं जानता वह अपनी ताकत को?
या भूल गया है अपने बल के प्रदर्शन को,

परंतु शायद नहीं चाहता वो ये सब करना
मर-मरी मुस्कान में बिहरता सा दिखता है।

हवा के नाजुक पंखों पर बैठ कर,
बना देता है रेत के ऊंचे-ऊंचे पहाड़।
गर्म तपती हुई धूप में,
रात की सीतलता का करता है इंतजार।।

डूबते सूरज की सपाट,
सिमटती-सरकती स्वर्ण लिप्त धूप में।
उत्तुंग के किसी शिखर पर बैठा
वो सोने सा गर्वित दिखता है।

बसन्त की सुकोमल शान्ति में वो,
सीने पर कांटे उगा कर हंसता है।
अषाढ़, के मेघों की गरजना में,
गुनगुनाता है वो मेघ मल्हार ।

रिमझिम टपकता बूँदों में भी
कैसी नन्हे बच्चे की तरह,
सुबकियां भर-भर कर नहाता
इतरता है और इठलाता
और कभी डरा सहमा सा दिखता है
हाय ! देखो इस मनुष्य को
न जाने क्या हो गया है,
कहां खो गई है इसकी हंसी।
कहां छिन गया है
इसकी आंखों का उल्लास,

कहां रह गई है इसकी आस उम्मीदें,
कहां छूट गया इसका उन्माद।
कहां बिखर गई तेरी खुशियां,
नहीं बजता तेरे हृदय में अनाहत नाद।

नहीं खिलता तेरे जीवन में,
कोई उत्सव के रंग न ही फूल।
कली अब पुष्प से पहले
सुकड़ सिमिट मर जाती है।
चारों और मचा है प्रतिप्रदा का
एक हाँ-हाँ कार, ऐ लूट एक खिंचा तानी।

पर ये सब क्या? क्यों कर है आज का मानव,
क्या उसे दिखाई नहीं दे रहा महा विनाश।
फिर क्यों कर रहा है क्या वह यह नहीं जानता,
विनाश का अह्वान जो खुद आपने ही हाथों से।

देख ले फिर से अपने बढ़ते
उस कदम को एक बार,
क्या वो चला रहे है तुझे।
या तू घिसट रहा उनके पीछे....।
अब भी ठहर जा, ठिठक जा,
और डूब जा अपने होने में।
देखना तब एक पल में
सब बदल जाएगा।
बस तुझे रुकना भर है,
परन्तु तू शायद रुकना और ठहरना।
भूल गया है इन अंधकार की गलियों में।

बस एक कदम और नहीं आगे रखना आगे,
इसके बाद तो पूर्ण इति है।
नहीं देख सकेगा तू पीछे चाह कर भी कुछ,
क्या समय देखता है पीछे मुड़कर कभी?
एक काली छाया निगल रही होगी इस धरा को,

इन सुरमई गर्वित जीवन को, उतुंग आनंद के शिखरों को
उन गर्वित क्षणों के गीतों को, उस कोमल कलरव को।
केवल बचा सके तो बचा इस अनधिकार, अधिकार बन।
उस काल के गर्व में छुपा है कहीं विनाश,
केवल, एक प्रलय, बीज जो बो रहा है तू
एक विभीषिका समेटे अपने आँचल में.......।।

बिना ध्यान जैसे जीवन सूना – (कविता)

बिना ध्यान जैसे जीवन सूना, प्रीत बिना हे सूने नयना।
राही बिन यूं पथ है सूना, दर्द बिना क्या दिल का होना।

जीवन उलझा मकड़ जाल सा, अब क्यों राह के कांटे चुनना।
सांस अटक गई हिचकी आते, तेरे बिना अब क्या है जीना।
मधु छलकती हो जब छम-छम, प्यालों में भी क्या है पीना।
गीत बनेगा कैसे प्रियतम, बनो न जब तक खुद ही वीणा।
उलझे जीवन के धागों से, अब क्या जीवन को सीना-बुनना।
तारा वीणा के सब टूटे है, गीत नहीं बस, मौन ही सुनना।
बैठ ठौर तुम थिर बन जाना, धीर-ध्वज तुम मन को करना।

कुरूपता और सौन्दर्य—(कविता)

कुरूपता और सौन्दर्य थी दो बहने।
चली वो इक दिन पृथ्वी पर रहने।
चलते-चलते जब पहुंची धरा पर।
धूल-धमास जमा उनके तन पर।

निर्मल जल की झील देख कर।
दोनों नहाने लगी मल-मल कर।
सौन्दर्य की देवी नहाते-नहाते,
दूर निकल गई सीतल जल में।

उसके सुन्दर वस्त्र देख कर,
कुरूपता की देवी का लालच आ गया।
क्यों ना मैं सुन्दर बन जाऊँ,
सौन्दर्य के देवी के वस्त्र चुराऊं,
कुछ इतराऊं सब को दिखलाऊं
कुछ पल सुन्दर बन सब को दिखलाऊं।
वस्त्र पहन कर कुरूपता की देवी,
भाग गई पृथ्वी पर रहने।

पीछे मुड़ सौंदर्य की देवी ने जब देखा।
अपने गायब वस्त्र देख कर।
समझ गई, वो छली गई है।
अपने ही खून से ठगी गई है।
समझ गई और पछताने लगी

पर अब पछताने से क्या होने वाला,
बन ठगी गई सी वो पछताई।
मेरे बहन ने मुझसे ये छल है।
दूर उतुंग पर, अंबर में भी।
फैल रही थी अंबर की ला लाई।
सूर्य की बेला जब होने को आई।
सौन्दर्य की देवी तब बहुत घबराई।
असहाय निर्बल सौन्दर्य की देवी,
अब क्या करती, वो रो भी न पाई।
अब लाचारी जान गई वो
वस्त्र पहन लिए कुरूपता के उसने।
चली ढूंढने कुरूपता को जग में।
ढूंढ कर वो हाई गई तब
नहीं मिली फिर कुरूपता देवी,
ढूंढ-ढूंढ कर थकी बेचारी।
कैसी बेबस थी लाचारी।
अपनों ने ही छला है जब उसे जग में
अपनों के छल से ही वह हारी।
सौंदर्य के वस्त्रों में छुपी कुरूपता
कुरूप वस्त्रों में छुपा हे सौंदर्य,
जग की आंखों में धूल झोंक कर
देखो कुरूपता की देवी उन वस्त्रों में
आज अभी भी यहां वहां सब और
राज सिंहासनों पर डटी हुई है।।

होश के बस दो कदम—कविता

सब चले जब हजार कदम,
मैं तो चल बस दो कदम।
इस तिमिर अंधकार में भी,
बंद आंखों के सहारे,
किस डगर पर,
किस सफर पर,
दौड़ते सब चले जा रहे।
किस तरफ ये कौन जाने,

पर समझते थे बेचारे!
पहुंचने को है वो किनारे।
मैं सिमट कर दूर पथ के,
ताकता यूं ही रह गया बस
दूर कोई पुकार रहा था
दे इशारों के बूला हरा
किस सहारे किस किनारे,
कौन से पथ पर चलूँ अब,
कितने पथ और कितने पथिक है,
क्या सभी मंजिल की और जाते
दिख रहे थे या वो छल था।

पथ-पथिक ये कहते जा रहे है,
ये ही पथ सच का सफर है,
लोग सब अपने पथों को,
कैसे सजा और संवार रहे थे,
और पथ की सुंदरता से अपनी और लुभा रहे थे।
दूर एक वीरान पथ था,
वहां बड़ी बीहड़ जगह थी,

वो कंटक भरी नीरव डगर थी,
परंतु देखने में अनजान सा थी।
फैली थी उस पर अंजान तनहाई
क्योंकि अभी वो गुमनाम पथ था।
झाड़ झक्कड़ उस पर उगे थे,
किन क्षणों ने आन मुझमें,
एक साहास ने हाथ थामा।

निडरता न घेर कर के
भर दिया था इक भरोसा हे
पकड़ कहने लगा वो पथ,
तू चला चल....तू चला चल।
मैं निडर-निष्कंप हो गया,
उस और जाता देख कर के
देखते सब रह गये थे,
पागल मुझे सब कह रहे थे।

सब कह रहे थे मुझको दीवाना
ये क्यों भटकना चाहता है?
गुम नाम पथ पर जा रहा है
क्या ये खूद को खो रहा है।
भर कर समर्पण साहस मन में,
मैं चला मदमस्त होकर,
उस डगर को चूम, छू कर

होश के वो दो कदम भी,
जीवन में उन्माद भर गये,
एक टूटे साज में वो,
राग और मधु गान दे गये
प्यास में एक आस भर गये

भटकन भरे उन सो कदम से
होश के वो दो कदम भी
होश मंजिल होश मार्ग बन गये
होश से सब जग बना है
थकना नहीं अब तू मुसाफिर
बस चला-चल तू चला चल।

प्रेम एक मधुमास है -- (कविता)

न वो कोई दाग है, न वो कोई आग।
एक मधुमास है, जो खिला है सदा।

प्रेम वो खुशबू है,
जो हृदय में बसी है।
न वो मिटती है
न वो दबती है
न वो चुभती है कभी।
ये तो वो बूंद है किसी नूर की,
जो कुदरत ने बहाई है सब में।
चाहे तुम जान सको चाहे न मान सको।
ये तो वो फूल है जो हृदय में खिला रहता है।
प्यार एहसास है, कोई राग है, दिल के तारों का।
वो सदा गाता है पीऊँ...पीऊँ का राग।
और पुकारा करता है बस एक ही नाम।
प्यार वो आस है, प्यार एक प्यास है।
बही इन सांसों की लय।
जो सदा जोड़ती है तुझको मुझमें।
मैं तड़पता रहूं सादा
उस दर्द के लिए
जो मुझे प्यास से मिला ही रहे है तुझसे।

हां मैं स्वार्थी हूं—(कविता)

हां मैं प्यार को एक दिखावे की वस्तु नहीं मानता।
हां मैं सम्बन्धों से प्यार नापने की कोशिश नहीं करता।
हां मैं अपनी पहचान पद, गाड़ी, मकान से नहीं करता।
हां मैं जवान होने का झूठा दिखावा नहीं करना चाहता।
हां मैं न जानते हुए भी ज्ञानी बनने का भ्रम नहीं पालता।
हां मैं दूसरे क्या कहेंगे के आधार पर जीवन नहीं जीता।
हां मैं जीवन को धन, मद, अहं के आस पास नहीं घूमने देता।
हां मैं अत्याचार, शोषण, गरीबी खत्म होने के सपने नहीं देखता।
हां मैं अपने सपनों का बोझ, बच्चों के कंधों पर नहीं लादता।
हां मैं किसी का भला नहीं कर सकता, पर बुरा नहीं करना चाहता।
हां मैं अपनी गुदड़ी और अपने पैरो को पड़ोसी को देख नहीं पसारता।

क्योंकि मैं जीवन को पुरी तरह से भभक कर जीना चाहता हूं।
क्योंकि मैं जीवन को क्षण-क्षण जीने की कला, जानना चाहता हूं।
क्योंकि में मरने से पहले अमृत को जानना चाहता हूं।
क्योंकि मैं मरते हुए मृत्यु से साक्षात्कार करना चाहता हूं।
क्योंकि मैं अपने होने को जानना चाहता हूं।
और चल पड़ा हूं स्वार्थी हो कर इस मार्ग पर,
और हो रहा हूं धीरे से अग्रसर स्वार्थी होने की तरफ,
हां शायद धीरे-धीरे में भी एक दिन पूरा स्वार्थी बन जाऊँ।
स्वयं में डूब जाऊँ, और खो जाऊँ आपने स्वयं में।
जो स्वयं को नहीं जानता, वह स्वार्थी कैसे हो सकता है?
स्वयं को जानना ही स्वार्थ है, स्वार्थी ही परमार्थी है।
जो अपने को नहीं जानता वो दूसरों को कैसे जान सकता है।

जो अपना भला नहीं कर सकता,
वो दूसरों का भला करने का भ्रम जरूर पाल लेता है।
क्योंकि मैं स्वार्थी हूं....स्वार्थी हूं.. हां मैं स्वार्थी हूं।.

और हो जाऊँ एक दिन संपूर्ण स्वार्थी।
हां मैं चाहता हूं सब मुझे स्वार्थी कहें ,
और मैं हो जाऊँ धन्य, उस परम शब्द से,
नहीं लगता स्वार्थी शब्द मुझे गाली जैसा,
जब कोई कहता है स्वार्थी मुझको]
मुझे लगती एक उपाधि, पुरस्कार के जैसा,
हां मैं चाहता हूं तुम मुझे कहो बार-बार स्वार्थी,
की देखो वो जा रहा एक स्वार्थी ।
हम एक भ्रम पाल रहे है,
नाहक दुःख उठाते चल रहे है।
जब दूसरे तुम्हें चलते है तुम्हें धिक्कारते है,
और तब तुम्हें समझ नहीं आता
खड़ा हो जाता अचंभित से,
और इस पीड़ा का आनंद सब मनाते है
सब कहते है देखो मैंने तो तुम्हारा भला चहा,
और तुमने मुझे क्या दिया,
इस लिए जानते थे पुराने लोग,
जब हम करते है किसी पर अहसान
उस के अहंकार को लगती है चोट,
नेकी कर ओर कुएँ में डाल,
और परमार्थ ही स्वार्थ है।

सूखे पत्ते कहीं खड़ते - (कविता)

सूखे पत्ते कहीं खड़कते, तेरी याद में यहां तड़पते।
बगिया में उपवन गदराया, तब भी हमको कांटे मिलते।
फूलो पर जब भंवरे हंसते, तेरी मिलन को हम है रोते।

अषाढ़ बीत गया बिता सावन, बदरा प्रीतम ला मनभावन।
पीडा से भर गया है दामन, पोर-पोर अब करता क्रंदन।
आस तेरी में थक गई अंखियां, चैन कहीं ने पाये ये मन।
जीवन के दिन नहीं सरते, सांस भी बन गई है अब बंधन।
उलझा जीवन-सुलझा ये मन, हमको ये दिवाना कहते।
झरने बहते, गीत वो कहते, सुन-सुन मन में हूक उठाते।
सूखे पत्ते कही खड़कते,
तेरी याद में यहां तड़पते.....

तेरी याद में तड़प रहे है, पाये न ये मन इक पल चैना।
नहीं सूझती डगर किधर भी, डसती मुझको काली रैना।
पागल मुझको कहता ये जग, गीत भी लागे कड़वे बैना।
आहों को झोली में भर कर, बजा रही हूं दिल की वीणा।
शब्द कहां होठों पर मेरे, तुम समझे उसको मौन की बैना।
आस लगाये बैठ है जब से, आकर हमसे कुछ तो कहना।
बुझने को जीवन का दीपक, तूफानों को कब तक है सहते।
सूखे पत्ते कही खड़कते,
तेरी याद में यहां तड़पते.....

अषाढ़ बीत गया बिता सावन, प्रीतम को ले आ मनभावन।
झींगुर बोले दिल को छोले, पीडा से भर गया अब दामन।
आस तेरी में थक गई अंखियां, चैन कही न पाता ये मन।
मिटने को है ये मन की बगिया, कौन दिखाये मुझको दर्पण।
याद तेरी में सुकड़ या है, बह गया सब जीवन का क्रंदन।
जीवन रूकता सा लगता है, जीवन के दिन नहीं सरकते।
सूखे पत्ते कहीं खड़कते, तेरी याद में यहां तड़पते।
बगिया में उपवन गदराया, तब भी हमको कांटे मिलते।
फूलो पर जब भंवरे हंसते, तेरी मिलन को हम है रोते।

जीवन दर्पण—(कविता)

धुँधले होते जीवन दर्पण में,
परछाई भी रही सुकड़ कर।
जर-जर होती इस काया को,
क्यों बैठे है उसे पकड़ कर।
लेकिन फिर भी कुछ जीवंत है,
सूखे होते ठूंठ वृक्ष सा
पल्लवित वल्लरी चढ़ी उतुंग पर,
मेरा मन क्यों नवयौवना बन रहा
देख रहा है नित नये-नये दर्पण,
वो नहीं देखता इस मिटते तन को
नहीं मानता किसी विघटन को
कायर भीरु सा बन कर फिर भी,
मैं देख रहा इस चिर हरण को
ये अविरल बहती उतुंग वासना
नित-नित उगते पात विमल से
सोचा था इसे हरा सकूंगा
थका सकूंगा समय सिहर तक
वो अमरबेल वल्लरी सी बन कर
मेरे तन-मन से यूं लिपट गई है
कहती है कुछ तो छूट गया है
देखो पूरी नहीं हो सकी वासना
किसी विधि करूं मैं फिर तर्पण
चाह जगत की अधीर तृप्ति
दूर खड़ी वो सभी कामना

सब तड़प-झिड़क कर मुझे देख रही है।
शायद वो फिर किसी आस में
मानों असाढ़ के उमड़ रहे हो ।
वो सूखे तन पर मचल रही है,
तूफ़ानों सी उछल रही है।
मैं जब पकड़ रहा था छाया,
वो मांग रही है सुकोमल काया,
जिस दर्पण में वो साज-सँवर कर
नई लहरों को खोज रही है।
मैं बेबस और लाचार खड़ा हूं
तूफ़ानों में फंसी है नाव सा
ले जाएगी किस और मुझे अब
मैं नहीं जानता हूं पर बस सा
थका मुसाफिर क्या चाहेगा
कब होगा रुकना, इस अनंत डगर का
इस पुकार रही है काया,
उत अंबर घटका बूला रही है।
प्रीतम की मधुर पुकार अब
कानों में अनुगूंज बनी है।
उस और पुकारता है अब प्रीतम
इस और बंधी जग की जंजीरे
क्या कभी किनारा पा जाऊँगा
नहीं जानता....नहीं जानता.....!

फिर पा लूं गा विस्तार आप सा -- कविता

नभ तूने तो देखा होगा, अनंत सृष्टियों का संघहार।
है धीर दृष्टा तुझे कभी तो आता होगा इस पर प्यार।

तू कैसे इतना अडिग खड़ा है, थिरता का मंदिर सा बनकर।
मेरे दीपक की क्षणिक ज्योति, कांप रही नित-नित रह कर।।
बुझने व मिटने से पहले, अहसास चाहता विलीन लहर सा।

नहीं चाहता मैं रह जाऊं,
जब तक न पूर्णता पाऊँ।
क्या तू पारितोषिक कर देगा मुझको?
या भर देगा अपने से मुझमें,
जो मिटा सकूँ मैं आपने अहं को
फिर फैल सकूँ संपूर्ण जगत में
कोई प्रीत प्यार की सरिता बन कर........

एक साध छलती, नहीं थमती।
सांस-सांस पर आकर कहती।
कैसे मैं तुझ सा हो जाऊँ
या तुझ में ही मैं खो जाऊँ।
जब आये संध्या सी भोर
क्यों न नाच उठे मन मोर,
पंख पसारे तार मंडल
पुकार रही नित नाचूँ और,
फैल-फैल कर नहीं फैलता

ये जग लगता मुझको कठोर।
पुछूंगा में इक दिन तुझे पाकर
क्यों छिपा ह्रदय में प्रीत तू बनकर
या मैं झूठा हूं, या तू चित चोर..........
कितना आशाएं छलती-लुटती,
बहरे कानों में आकर कहती।
कि क्यों जीवन बनने से पहले
साथ-साथ ही मिटता जाता।
कौन कहेगा तुझको श्रेष्ठता
तू दूर नदी तट खड़ा देखता।
फिर भी जीवन अविरल सा बहता
तू बे बूझा बना सदा ही रहता
नित झांक रहा परदों के पीछे
तू हंसता है और नित ही रिझाता।
तू देख सकेगा इस पीड़ा को
इक दिन मैं भी मिट जाऊंगा
सरिता बन कर के तुझमें
और पा लूं गा विस्तार आप सा......

जिन्दगी –(कविता)

ऐ जिन्दगी तुझे हम यूं ही
यायावर गुजरने नहीं देंगे।
हम तुझे सजायेंगे और संवारेंगे
बनाएंगे फिर से एक नई दुलहन सा।
तेरे मासूम उदास चेहरे पर
फिर लोटा लायेंगे नई हंसी खुशी
एक नई ताजगी

तेरे इन सूखे-पथराये होंठों पर
लेकर आएंगे एक नई मुस्कान,
जीवन के इस वीरान पड़े चमन में
देखना लौटेंगी एक दिन जरूर बहार
चाहें वो हमें लानी ही क्यों न पड़े उधार
उन बिखरे-कुचले फूलों से ही
चुन कर लायेंगे कुछ कलियां
तेरे वीराने पड़े सूने चमन को
साज-संवार देंगे हम रस से
तेरे उन भय क्रांत सपनों में
फिर से भर देंगे नये-नये रंग
वो उदास मायूस तेरे माथे का सिंदूर
फिर से दमक उठेगा
कहीं दूर उतुंग पर उगते
सूर्य की लालिमा की तरह
तेरी वो मायूसी और उदासी

जो तुझे धेरे रहती है क्षण
देखना वो भी तेरे दामन को छोड़ कर
छुप जाएगी किन्हीं अंधेरी गलियों में
फेल जाएगा तेरे जीवन में वो स्वर्णिम प्रकाश
तेरे पत्थर से जमें वे होंठ लवरेज उठेंगे
और तेरे पेरो की जकड़ की बेड़ियां
फिर खुल जायेगी और थिरक उठेंगे
छम-छम बांधें फिर उन टूटे घुंघरुओं को
जिनमें खो गये है कहीं
वो गीत तो थम गये थे बनेंगे मेघ मल्हार

वो सुरमय मधुर पक्षियों के गान सून
तुम्हारा वो मन मयूर फिर से डोल उठेगी,
हवाओं के दामन पर लग जायेंगे पंख अंजान से
पत्तों से टकराती इठलाती, एक मरमरी पुकार
लोट आयेगी फिर वही अठखेलियां बचपन सी
झरनों का वो मधुर नाद फिर से अंबर का बनेगा हिंडोला

फिर कैसा होगा चारों तरफ गुंजायमान होगा वृंदगान
फिर दूर कहीं अंबर के सर पर इंद्र देव भी
सज़ा देगा फिर एक इंद्रधनुष ताज
वो थके हारे हुए मुसाफिर
जो रूक गये है कहीं चलते—चलते
फिर पायेंगे अपने जीवन में एक नई आभा

और तेरा मधुर वृंद गान
जीवन फिर भर देगा गीतों से तेरा दामन
नई उमंग की नई किरण बन कर
जाग उठेगा वो तेरा टूटा बिखरा साहस को

फिर खड़ा होगा और चल पड़ेगा
उस सफर पर,
नई उल्लास और उत्साह से भर कर
दूर कहीं एक पूर्णता की दमक
तुझे पुकार दे रही होगी

वो कर रही होगा पुकार......क्षितिज कि
की अब नहीं रुकना हे तुम्हें
अब तो भौर का तारा भी दमक उठा है नभ पर
उस उतुंग अंजानी सी मुंडेर से
लुभा रहा होगा तेरा प्यार
और कर रहा होगा इशारा कोई
ओह! तुम मेरे प्यारे सद्गुरु।
तुम धन्य , तुम्हारी करुणा का ये सागर
ह्रदय से उठा रहा है एक मौन पुकार
बस एक गहरी ठंडी आह।
बन जायेगी ,वही संपूर्ण मंत्र
एक मुक्ति का एहसास
एक साहास एक संकल्प
जो होगा मार्ग का कलेवा तेरा।

जीवन का आधार बन गया — (कविता)

कोई कल तक था अपरिचित सा।
वो जीवन का आधार बन गया।

बांध रही एकाकी मन को..
यादों की जंजीर सुनहली,
निंदयारी पलकों ने खोई..
सपनों की जागीर रुपहली;
रोम-रोम पर एक अंजानी,
मीठी-सी सिहरन का पहरा,
दृष्टि-परिधि में भी न रहा जो..
सांसों का आगार बन गया।

आश्वासन के शब्द-पखेरू..
वचनों की शाखों पर चहके,
अभिलाषा के कमल वनों में..
सुरभित धीरज पद-पद महके;
उग आए हैं बोल प्यार के,
भोले-भोले प्रणय-अजिर में;
नाम किसी का अनजाने ही..
गीतों का आभार बन गया।

अंतर के दर्पण में मैंने..
ज्योति-विनिंदक रूप उतारा,
पर असीम को सीमित करना..
सहज नहीं इससे मैं हारा;
निर्वसन, असफल रेखाएं,
हाथ उठा कर गगन निहारें;
चित्र किसी का प्राण अजाने..
मेरा ही आकार बन गया!

प्यार का नश्तर — (कविता)

तेरी याद में इत दिल तड़पे, ना आँख में आंसू आये है।
प्यार के नश्तर चुभता है अब,जो तीर विरह के खाये है।

तेरे आने की आहट सुन कर, पथ पर अपनी आँख बिछाई।
उन वीरान अकेली राहों पर भी, तेरी यादों की थी परछाई।
टूटे दिल के हर टुकड़े में, क्यों चमक रही थी तेरी रुसवाई।
कोयल की इन कुहुको में भी, दर्द की बजती है शहनाई।
कहीं दूर धुँधलाती श्याम में भी, तेरा ही अक्स समाये है।

कोई तो झूठी आस बांधकर, मेरा जीवन मुझको दे जाता।
तुम आते हो, तुम आओगे, की सांसों का बंधन रूक जाता।
मन मान गया, तन जान गया, पर दिल कोई न समझाता।
सूनी काली उन रातों में, क्यों अंबर तारों से है भर जाता।
सावन की गिरती ये बूंदें भी, क्या तुम मेरे आंसू न पाता।
इन पथ पर बनते चाप बता, क्या भ्रम हमने ही खाये है।
तेरी याद में इत दिल तड़पे, ना आँख में आंसू आये है।

पत्थर की पुकार - (कविता)

कौन? कहता है पत्थरों को पीडा नहीं होती,
वो रो सकता है और कर सकता है चीत्कार,
वो करता है कुछ बाते इस फूस-फूसाहट से
जो हमें लगती है अनसुनी सी।
वो इतनी मंद्र ओर सुकोमल होती है।
वो छू नहीं सकती पत्थरों के कानों,
ओर जगा नहीं सकता जड़वत दिलों में स्पंदन,
बो फूस-फूसा कर कुछ कहना चाहता है,
कोई अनसुना गीत......कोई मधुर राग।
पर हम जीते है, उस दुनिया मैं
जहां नहीं छू सकती उन पत्थरों की पुकार,
और न भेद सकती उन दिलों को
जो मनुष्य होने पर भी,
करते पत्थर सा बर्ताव।
जीवित रह कर भी, नहीं जीते वो लगते है।
सच कहे तो क्या हम जीवन को जीते है,
बस उसे ढोते से दिखाई देते है।
जैसे अपने ही सलीब को लिए जा रहे हो,
अपने ही कंधों पर।
हाय मनुष्य,
तू कब जाग सकेगा,
कितनी मधुर बेला जा चुकी है।
कितनी कोकिला गा चूकी मधुर गान।
क्या नहीं आएगा कभी भी,

तेरे जीवन में वो सवेरा।
जो भर जाए तैरी गोद में
कुछ अनमोल स्वर्णिम किरणें.......

तड़प है परंतु दर्द कहां? - कविता

तड़प है परंतु दर्द कहां है उसमें,
वो तो एक एहसास है, पकड़ कहां है उसमें।
तुम दूर तो हो लेकिन, लेकिन दूर कहां हमसे।
तार बिंधे है विरह के, राग कहां है इनमें।
पीर ने घेरा है हमको, पर दर्द कहां है दिल में
कुछ लोग कितने अनजान से होते है
परंतु कितने करीब होते है आपने
मानो वो मैं हूं और मैं उसकी परछाई
कैसे एक याद की बदली छाई रहती है
मानो अभी वो पास आकर बैठ जायेंगे
मिले है उनसे मेरे ह्रदय के तार
यादों का एक सैलाब जायेगा
तब बहेंगे तार-तार आंसू
वहां पास ही जब छलक रहा होगा उन्माद
किसी सुदूर की घाटी से
जब पुकारता सी लगाता लगता है कोई है
उस ओ अजनबी तुम कितने
अपने-अपने से लगने लगते हो
मानो मैं-मैं नहीं तुम ही तुम हो
कैसे दूरी मिट जाती है पल में
कई युगों की, कई कल्पों की
अजनबी मैंने तुम्हें पहले भी जाना है
जीया है, पिया है तेरे संग साथ को

न जाने क्यों मुझे बार-बार ऐसा लगता है।
तुम ही मेरे हो।
तुम ही पुकार रहे हो मुझे।।

ज्योति विनिंदक रूप - (कविता)

अंतर के दर्पण में मैंने..
ज्योति-विनिंदक रूप उतारा,
पर असीम को सीमित करना..
सहज नहीं इससे मैं हारा
निर्वासिन, असफल रेखाएं,
हाथ उठा कर गगन निहारें
चित्र किसी का प्राण अजाने..
मेरा ही आकार बन गया!
आड़ी तिरछी रेखाओं से
एक तेरा फिर रूप बन गया।
नयनों में तू है,
सांसों में एहसास तुम्हारा
जीवन बना मधुमास हमारा
तेरी हलकी सी एक छुअन से
अहिल्या सा उधार हो गया।
इन चरणों में प्रियतम प्यारे
मैं लोहा भी लकड़ी बन तर गया।
जीवन तर्पण जीवन अर्पण
हर रूप तुम लागे प्यारा।
कैसे कह दूँ प्राण आधार
तुमने क्यों दिल छला हमारा।
नयनों में तू, श्वास में तुम
तू तो समरस बन कर मेरे
जीवन में बस गया है सारा।

देखा है जब से तुमको -- (कविता)

देखा है जब से तुमको
भाये न दूजा हमको।
खुशबु तुम्हारी आई,
तरूँ पर बसंत लाई,
समझा मैं तू बस आई।
हमने क्यों नींद गवाई।
चटकी है कलियां जब भी, देखा है उनमें तुझको।
देखा है जब से तुझको........

कोयल पुकारें बन में,
हिलोरे उठे है मन में,
कैसे कहे हम तुमको,
जीवन है तुमसे तन में,
धड़कन नहीं है दिल की, पुकार रहा दिल तुमको।
देखा है जब से तुमको......

जेठ की तपती हवाएँ,
मेरी जलन बतलाइए,
सूखे पड़े मधुबन भी,
मेरी ही कहानी गाए।
आस बची है फिर भी, बरसोगी मेधा बनकर।
देखा है जब से तुमको...

हां तुम विष कन्या नहीं हो? (कविता)

कैसे कहूं तुझे विष-कन्या,
ये तो उसका भी अपमान होगा।
वह त्याग-तपस्या करती है,
एक देश एक लक्ष्य के लिए।
प्राणों की बाजी लगती है
अपने प्रेम के प्याले में भरती है विष।
सहज सरल करती है
तन-मन में विष का वास।
विश्वास—हां विश्वास में ही छुपा है
विष का वास।
परंतु वह एक लक्ष्य भेदती है,
अपने प्रिय को नहीं।
परंतु तुमने तो प्रेम का आवरण ओढ़ा..
और छला उसे ही जिसने किस तुझ पर विश्वास,
प्रेम तो अंधा होता है
यही है उसकी महानता।
परंतु वह नहीं जानता था
तेरे अंदर है विष+वास को
विष का वास तो नागिन में भी होता है
वही तो उसका गर्व,
परंतु नहीं डसती वह अपने को ही।
आज एक दिल टूटा हे,
परंतु हारे है एक हजार दिल।
स्त्री जाति के नाम को तूने कलंकित किया है,

किस लिए? केवल चंद पैसे एक झूठे आवरण के लिए....
किसी के अनमोल जीवन से खेली है तू।
एक प्रतिभा को विनष्ट किया है,
तू चाहती तो बन सकती थी
उसकी लता बन कर लता,
खिला सकती थी तुम अनंत पुष्प।
परंतु तुम तो अमर बेल भी नहीं बन पाई,
वह भी नहीं मारती उस वृक्ष को जिससे पाती है जीवन
काश तेरा ह्रदय बोल पाता सच
और तेरे लबों पर आ जाते पश्चात के चार शब्द
खोल लेती अपनी आंखों पर बंधी वह पट्टी
मनुष्य ही नहीं पूर्ण प्रकृति तुझे माफ कर देती
हम तो प्रत्येक मृत्युकर को स्वर्ग वासी मानते है
परंतु तू लगती है आज भी अपने प्रेम पर ही लांछन।
तुझे कैसे माफ करेगा....कोई...नहीं...नहीं. कभी नहीं।
तूने तो अपने दोनों जहां कलंकित-कलुषित कर लिए है।
नहीं है तू विष कन्या...हां नहीं है तू विष कन्या।

वृक्ष और पत्थर – (कविता)

एक वृक्ष ने जब पुछा अपने
संग साथी पत्थर से
तुम किस तरह के वृक्ष हो,
न तुम में पत्ते आते है
न ही खिलते है कोई पुष्प।

वह मूक केवल देखता रहा उस वृक्ष को
शब्द नहीं थे उसके पास
शायद यहीं अपने होने की
पीड़ा उसे देगी एक दिन
उतुंग उठने का साहस
और बन कर कोई हिमालय
वह समेट लेगा अपनी ही
गोद में हजारों वृक्षों को।
छू लेगा अंबर की नीलिमा को
परंतु चरण टिके रहेंगे उसके
धरा के आगोश में ही।

यही तो है उसकी पूर्णता।
उसकी है यही पहचान।
पत्थर ने देखा उस वृक्ष को
और यूं तुनक कर लगा हंसने
जैसे उसकी बात ही उसका उत्तर है
और फिर दोनों एक दूसरे के संग

के आनंद में डूब गए।
वृक्ष किलकारी मार कर झूमने लगा हवा में
पत्थर मौन अंतस के राग में
बहने लगा मदमस्त हो कर
कहां देख पाया उसकी मस्ती को
वह वृक्ष या कोई दूसरा डूब गया।
बहने लगी उसकी तरलता
उसकी कठोर शिराओं में
मिट गया होने न होने का भेद पल में।
और कुछ पल छाई रही शांति
फिर दोनों हो गये मौन
विलय हो एक होना एक दूसरे में
उसी पल वहां न रहा कोई
और दोनों हो गए पूर्ण।

अजनबी तुम अपने से लगते हो-(कविता)

तड़प है परंतु दर्द कहां है उसमें,
वह एक एहसास है, पकड़ कहां है उसमें।
वो दूर है मगर दूर कहां है हमसे।
तार बिंधे है विरह के, राग कहां है इनमें।
पीर ने घेरा हमको, दर्द कहां है दिल में
कुछ लोग कितने अनजान से होते है
परंतु कितने करीब होते है आपने
मानो वो मैं हूं और वो उसकी परछाई
कैसे एक याद की बदली घिर आई
मानो अभी वा पास आकर बैठ जाएगा
और मिलेंगे ह्रदय से ह्रदय के तार
तब बहेगा धार-धार आंसू के झरने
वहां छलक रहा होगा कोई उन्माद
दूर किसी सुदूर की घाटी से
कोई पुकारता सा लगता है
अजनबी तुम कितने अपने-अपने से लगते हो
मानो मैं-मैं नहीं तुम ही तुम हो
कैसे दूरी मिट जाती है पल में
कई युगों की कल्पों की
अजनबी मैंने तुम्हें पहले भी जाना है
जीया है, पिया है तेरे संग साथ को
न जाने क्यों मुझे बार-बार ऐसा लगता है।

आशा के पुष्प खिलाएगी—(कविता)

वो सुबह-अभी फिर आयेगी।
अंधियारे जीवन के पथ पर,
आशा के पुष्प खिलाएगी।
सावन की आहट आती है,
फिर दुख के बादल-छट जायेंगे।
जीवन के कठोर पठारों पर,
हम एक कदम फिर चढ़ जायेंगे।
दुख पीड़ा की घड़ियों में भी,
फिर साहास के बीज उगाएंगे।
वो दूर खिले उन फूलों से
कोई हंस कर यूं कह जाता है।
हमको भी हंसना सिखला दो
तुम कांटों पर भी हंस लेते हो
इस तीव्र धूप और कष्टों में
तुम उन्माद कहां से लाते हो..
जीवन की काली छाया को
कोई पावनता आकर घेरेगी।
इन उठती गिरती श्वास पर
कोई मधु रंग राग बजायेंगे....
वो सुबह एक दिन आयेगी
तुम उसको लेकर आओगे।
हम मिल झूलकर कर फिर से
को आनंद गीत सुनायेंगे।
वो सुबह अभी फिर लायेंगे...॥

ओशो प्यारे दिल में समा रे

ओशो प्यारे दिल में समा रे, नयनों में बस जा रे।
मन मंदिर तो आन सजे हो, श्वास-श्वास रच जा रे।

पथ को निहारूँ, आँगन बुहारूँ।
अबरू चंदन, तुझ पर वारूँ।
प्यास जगी है, तड़प बढ़ी
चित-चातक बन तुझे पुकारूँ।
वो अमृत रस बरसा रे...
ओशो प्यारे दिल में समा रे।

सांस पराई, सी लगती है।
आस भी बुझती सी दिखती है।
प्यार से दामन को भर दिया तूने
पर झोली खाली सी दिखती है।
अब आना है तो आ जा रे....
ओशो प्यारे दिल में समा रे।

तुझे देख दीवाने हो गए।
हम बस तुझ में ही खो गए।
बिरह रैन अब कैसे गुजारूँ।
कुछ तो कानों में तुम कह गए।
रूप को अरूप बना रे....
ओशो प्यारे दिल में समा रे।

कुत्तों का आत्मसम्मान—(कविता)

बहुत पहले की है बात,
कुत्तों को सताने लगी एक बात।
हम करते है कितनी वफ़ादारी,
देखो भला इस काली गहरी रात में
जाग-जाग कर करते है इनकी चौकी दरी।
चाहे वह ठिठुरती ठंड हो, कड़कती बिजलियां हो
या आग उगलती गर्मी, हम अडिग रहते है अपने पहरे पर।
कितना भौंक-भौंक कर, रखते है चारों और सबका ध्यान।
ताकी कोई चोर लुटेरा लूट न ले इस इंसान को।
न लेते है सतत नींद और रहते है कितने चौकन्ने।
पर देखो ये कैसा इंसान,
न मानता यह एहसान,
न इसके मन में कोई गुण है न शान।
डाँटता है हमीं को, कि हम क्यों भौंकते है।
इस सब से हमारी नींद में विधन पड़ता है।
देखो उड़ाता है ये उलटा हमारा ही मजाक।
फिर एक दिन कुतों के प्रधान ने, किया ऐलान।
तुम न होना परेशान,
न काटना न भोंकना।
हम नहीं होने देंगे अपनी जाती का अपमान।
आखिर हमारा खुद का भी तो है कोई आत्म सम्मान।
चारों तरफ प्रधान की बात से उठा जय घोष।
और ले ली सबने शपथ...नहीं भोंकेंगे आज के बाद नाहक हम ।
दो दिन बीतते-न-बीतते शहर की गलियों में

छाया रहा रात भर सन्नाटा।
कुतें पड़े रहे दुबके एकांत कोनों में
न लगे किसी को भूख न ही लगी प्यास,
फैली हुई थी चारों मायूसी ओर उदासी,
जीवन नीरस, और बेजान सा हो गया।
ऐसा लगा भौंकना क्या गया
सर्वस्व उनसे छिन लिया।
और आई गई आखिर किसी तरह वह तीसरी रात,
न कोई भाषण, न कोई बात, सब थे कितने चुप चाप
अचानक कुत्तों का प्रधान। गया एक अंधेरी गली में,
और भरी एक हुंकार, अपने प्राणों से।
किया उद्घोष. भोंक...भोंक....भोंक के मंत्र का।
गुंज उठा चारों और जयघोष।
गुंजी उठी चारों और कुर्तों की हुंकार उन नीरस गलियों में,
मानों वह एक बार फिर जीवंतता फैल चारों ओर
सूखे प्राणों में भर गया जीवन का संचार,
नहीं पूछा किसी ने किसी से भी
कि किसने तोड़ी पहली शपथ,
अचानक चारों और फिर कैसा उत्सव को माहौल हो गया।
जैसे किसी मुरदों में भर दिये गये हो प्राण
हिला रहे थे सब खुशी के मारे अपनी पूछ,
और चाट रहे थे मुख एक दूसरे का
पल में मिट गया अहं का दुख.......
भोंकना ही है जीवन,
वहीं है हमारा मान सम्मान,
इसमें कहां छिपा अपमान
भुला दिया उस आत्म सम्मान...के ज्ञान को।

अटल हो विश्वास जिसको—(कविता)

चल पड़ा पथ पर पथिक जब,
कौन बाधा रोकेगी उसको।
कौन डगर भटका सकेगी,
दृढ़ हो विश्वास जिसको।।

देख राहों की रूकावट,
तू न थकना, तू न रुकना।
आंधी और तूफान से भी,
तू न डरना, न सहमना।
डिगने लगे विश्वास जब भी,
प्रेम पथ के बीज बोना।
देख सागर की तू गर्जन,
लहर बन कर विलीन होना।

छुपा सकेगी क्या रातें काली, हो सुबह की आस जिसको।
कौन डगर भटका सकेगी, दृढ़ हो विश्वास जिसको।।

छीन ले पीड़ा जगत की,
तू उन्हें नव साहस देना।
पथ पर रुके जब कोई मुसाफिर,
फिर नया उन्माद भरना।
मंज़िले जब खो रही हो,
प्रेम पथ की ठौर देना।
शुष्क होते उन लबों को,

जिन्दगी का गीत देना।
कौन राह रोकेगी उनको,
कौन उनको झुका सकेगी।

पूर्णता जिसमें समाई, अटल हो विश्वास जिसको।
कौन डगर भटका सकेगी, दृढ़ हो विश्वास जिसको।

दिल की लगी को दिल ही जाने – (गीत)

दिल की लगी को दिल ही जानें, दिल का लगान खेल नहीं।
हंसती है दुनिया दिल मिलने पर, मिल के बिछड़ना मेल नहीं।

आस लगी है, वीरानों को, आयेगा फिर वो सावन।
सबके मिलते मित यहां पर, मेरा भी होगा मधुर मिलन।
साँसे भी अब थमने लगी है, बुझने लगा है अब जीवन।
आंसू भी पलकों पर रह गये, बहने की अब आस नहीं।
दिल की लगी को दिल ही जाने, दिल का लगाना खेल नहीं।

पथ सुना है, सुना है मन, सुना जीवन का आँगन।
भरने को थी मेरी गागर, छटक दिया तुमने दामन।
सूखी पत्ते पुकार रहे है, आयेगा कब वो सावन।
दूर कहे अब किस को ये मन, जब अपना कोई पास नहीं।
दिल की लगा को दिल ही जाने, दिल का लगाना खेल नहीं।

कौन सहेगा, इतना जफ़ा जब, छोटा सा हो ये जीवन।
अपनी-अपनी दुनिया सबकी, अपना-अपना सबका मन।
सुख गई जीवन की धारा, सुख गया अब वो जोबन।
चलना भी क्या अब उन रहो पर, तुमसे जिन पर मेल नहीं।
दिल की लगी को दिल ही जाने, दिल का लगान खेल नहीं।

कुछ तो था जो हमसे छूटा, छूटा जब से तेरा संग।
बुझ गये सारे दीप गगन के, बैरंग हो गये सारे रंग।
बीत गया मधुमास का मौसम,हो गया वीराने का संग।
सूनी राहे भी पुकार रही है, आयेगा फिर से वो सावन।
पथ तकते पथरा गई अँखिया, आने की कोई आस नहीं।
दिल की लगी को दिल ही जाने दिल का लगना खेल नहीं।।

तपता आंगन-जलता ये मन, जलता जीवन का हर पल।
उमड़ घुमड़ जब सावन आये, चेन मिले न पल दो पल।
आंगन बुहारूँ, पथ को निहारूँ, समझूं अगरू और चंदन।
इस बार मिलेंगे ऐसे प्रीतम, फिर मिट जाये ये तन मन।
तेरे आने से, मेरी भरेगी ये गागर, धन्य होगा ये जीवन।
राग में गाऊं किस तानों पर, सुर तानों का अब मेल नहीं।

दिल की लगी को दिल ही जानें, दिल का लगान खेल नहीं।
हंसती है दुनिया दिल मिलने पर, मिल के बिछड़ना मेल नहीं।

नदी तीर (कविता)

जब भी मैं जाती नदी तीर,
मन कितना हो जाता अधीर!
बालू का वो मुलायम शीतल स्पर्श,
कर जाता मेरा रोंआँ-रोंआँ सिहर।

तब भर जाती एक पूरित तृप्ति से,
वो फैल जाती मेरे तन-मन पर।
सब बनाते जब बालू से घर।
मैं बनाती एक सुंदर सा मंदिर।

होता मेरा मंदिर सबसे ऊँचा,
सबसे न्यारा कितना प्यारा
जो होता देखने में अति सुंदर,
खूब सज़ा कर, और संवार कर,
करती थी मैं केवल तेरा इंतजार,

तुम आओगे जब इसके अंदर।
तभी तो कहलाएगा ये मंदिर।
कुछ ही क्षण में मन के अंदर,
शंका का होता मुझे अहसास,
तुम कैसे समा सकोगे इसमें,
ये तो है कितना छोटा सा....

घूँट जाएगी तुम्हारी साँसे।
इतना छोटा सा है ये मंदिर,
कैसे समा सकोगे तुम इसमें
तुम अपूर्णता के हो सागर।
आओगे तुम कैसे इस गागर,

तब मैं डर कर, और सिहर कर,
कहीं न आ जाओ तुम इसके अंदर
और घुट जाए तुम्हारा दम।
हाय में कितनी हूं बेरहम बेईमान।

मैं घबरा कर,
उसे तोड़ कर,
उलझे जीवन के तार खोल कर,
डरती सहमती सी और दौड़ाकर
अंदर एक खुशी को छिपाकर,
छिप जाती मां के आँचल में जाकर,
एक अपराध भाव को लेकर,
क्यों मैं करना चाहती हूं तुम्हें कैद।
यहीं बात मैं नहीं समझ पाती।
मां मेरे बालों में हाथ फेरती
मुक्ति का अहसास दिलाती।
तुम्हें देखता इधर देखकर,
मां के आँचल में है सिमट-सुकड़ कर।
नहीं बनाया फिर कोई मंदिर।
क्यों हम करते है जिसको प्यार?
करते है कुछ ज़ंजीरें तैयार,
क्या यहीं रह गया है हथियार,
क्यों नहीं करते हम एतबार,

तोड़ के देखो ये बंधन की दीवार
यहां जो हारा वही वह जीता
कौन करेगा इस पर एतबार
तुम तो जान चूके हो प्रीतम
ये सब संसार है माया
क्यों छलती है ये जग की छाया
जब तुम प्रेम प्रीत की बात बनोगे
तभी तो होगा हमारा विस्तार,

यहीं धर्म का बस है सार,
प्रेम ही है जीवन का आधार
फैल रहा है ये संसार,
महक उठेगा तुम्हारा प्यार...
प्रीतम बुला रहा हर बार
जो हारा वो हो गया पार
न्यारा है इसका आधार......

कहां तक है रिश्तों की दीवारें

कहां तक है रिश्तों की दीवारें
कहां से होते पथ-सब न्यारे
झूठे है बंधन अब सारे
नहीं ताकते है कोई सहारे
चलेंगे उस पथ बिंदु के सहारे
जो दिखता है जग से न्यारा
जो नहीं खोजता कोई सहारा
कितने न्यारे कितने प्यारे
मिटते बनते ये सपने सारे
ओशो प्यारे....
जग से न्यारे
बन गये हम तो तेरी प्यारे
मन कोना-कोना तुम्हें पुकारे
तेरे द्वारे हम तेरे दुलारे
भर गये तुम दामन को हमारे
जग से न्यारे सब से प्यारे
मेरे तम मन तुझ पर वारे
ओशो प्यारे......ओशो प्यारे
आजा अब तो ओशो प्यारे।

किसको पकड़े किसको छोड़े

किसको पकड़े किसको छोड़े, कदम-कदम पर आग बिछी है।
अपने अपनों को नोच रहे है, चारों ओर हाहाकार मची है।
उतर गई इत अहं की चमड़ी, अब तो केवल धूल बची है।
कोई न जाने किससे आगे, नित अपना ही तन खोते जोते।
पर इस जीवन के जटिल जाल को
कहां समझ है कोई पाता.......
कितनी सपनों को था देखा हमने,
कितने तारे थे मेरे दामन में।।
कितनी रुसवाइयां सही थी हमने,
कितने वादों पर एतबार किया था।
सांसों के इन हारों को गुथा हमने।
रातों के तारों के छुपने से पहले,
कितने आंसुओं की पिरोई थी माला!
कितनी सिसकियाँ दबी घुटी सी,
सिसक-सिसक कर कुछ कहना चाहा,
सपनों को पलकों पे जाने से पहले।
कितनी सीने में दबी थी आहें।
कोई तो जाकर उनसे कह दो।
है मूक स्वर कोई दबा घुटा सा।
वो दूर खड़ा अब सिसक रहा है।
वीरान पड़ी अंधी गलियों में
कोई तड़पता खड़ा इधर है।
उनके आने का इंतजार बहुत है।
अपनी सांसों का एतबार नहीं है।

मां – केवल एक शब्द नहीं है (कविता)

मां, केवल यह एक शब्द ही नहीं,
न है ये कोई धर्म-पुराण है।
ये तो केन्द्र है, सम्पूर्ण सृष्टियों का,
गंगा के उद्गमन सा,
समेटे है अपने में सागर कि विशालता को,
मां तू ही तो प्रकृति का सौन्दर्य,
सृष्टि में फैला प्यार भी तू ही है,
जीवन तेरा ही स्पंदन नहीं है क्या?
देख तेरे से ही फैला है
चारों और फैला ये पूर्णता का विस्तार
इत-उत सब और केवल तेरा ही तो स्वरूप है
तेरी पवित्रता हिमालय से भी ऊंची है,
किसी श्वेत धवल श्वेतांबर सी
तेरे आँचल की छांव,
ही तो है समग्रता में फैला ये जीवन
और समस्त में फैला ममत्व
क्या तेरे प्यार ही तो ह्रदय का विस्तार
क्या ये नहीं है, तो और उसके अलावा है और क्या?
जिसे हम धर्म सम्प्रदाय कहते है
क्या वो तुझसे या तुम्हारे चरणों से बड़ा है,
परमात्मा भी तुझ से महान-पवित्र कैसे हो सकता है।
और दूसरी और इन धर्म के ठेकेदारों को देखो
बहा रहे तेरा ही दूध जो खून बन कर बह रहा है
सब की शिराओं में

औ निर्दय, देखो इस और एक बार,
और पूँछों उन माँओं से,
धर्म के नाम पर जो तुम बहा रहे हो
ये खून किन्हीं अंजान निर्दोष का,
क्या तुम जानते हो उन्हें
या मिले हो तुम उससे कभी आमने सामने,
ये कैसी बेहोशी है, केवल मुड़ता
जो बहाया जा रहा है वो खून
क्या वो किन्हीं माँओं का दूध नहीं है,
फिर कही भी कतरा गिरे उस खून का,
क्या नहीं चीखता होगा किसी मां का हृदय,
ये सब होता देख कर, रोता, तड़पता,
और कराहा उठती होगी प्रकृति भी
एक चित कार एक हाहाकार एक विलाप
कैसा द्रवित हो छटपटा उठती होगी उसकी लाचारी।
देखो उस और इक बार मुड़ एक फिर
क्या तुम कर सकोगे उन आँखों का सामना
किन्हीं मां ने तुम्हें भी तो पाला था
अपना दूध पीला कर,
जो बह रहा है तुम्हारे शरीर खून बन कर
क्या वो मां जब तुमसे जवाब मांगेगी
होगा तुम्हारे पास क्या कोई जवाब,
क्योंकि नहीं है, कोई जवाब तुम्हारे पास
क्योंकि तुम्हारे उत्तर थोथे है,
केवल हैवानियत से भरे है।
देखो औ धर्म के ठेकेदारों
क्या कर पाओगे उन पथराई आंखों का सामना?,
पाषाण बन जो निहारोगे तुम्हें,
देखना नहीं बहेंगे उन आंखों से कोई कोर कतरा आंसू,

शायद शुष्क हो गई है वह जीवन की झील
रोक ली है उन्होंने अपनी सिसकियों भी,
उसी कफन को मुंह ठूस कर
नहीं तो टूट जायेगा कोई सैलाब,
प्रलाप कर उठेगी सृष्टि कहीं पर
और टूट जायेंगे प्रेम के वो नाज़ुक किनारे
कहीं दूर क्षितिज के
रह जायेगा पीछे एक हाँ-हाँ कार,
एक प्रलय का तांडव बनकर,
और गूंज उठे फिर शायद
वो मौन नाद एक बार फिर,
मनु और स्मृति की तरह,
किसी.....एक मरघट की शांति अपने में समाए हुए
फैली होगी कोई निस्तब्धता चारों ओर
किसी मौन मूक मंद्र सा उत्तर अपने में लिए।

कौन आधार—(कविता)

एक पत्थर आलंबन का है।
बन गई शोभा शिखर की।
एक तोरण शिखर का ताल बन कर,
एक सहता बोझ गुंबद का,
जो जोड़ता है पूर्णता सा
एक दीवारों की चादर
जो बाँटती दिखती सी लगती
एक जोड़ता शीश धरा से
एक है नमन विषधर बनता
कौन आधार है इस जगत का?
है मात्र सब अहं का भ्रम क्या?
फिर क्यों हमारे शीश झुकते
उस अविलंब और अतल पर
परंतु क्या कहीं झुकता है अहं भी
या चेतना झुकती सी लगती
नहीं झुका शशि अतुल सा
फिर कहां तुम मिटते
तुम झुके और मिट गये फिर
नमन है तुम्हें शत-शत वो करता
तू ही तो आधार है जग का
उस शीश शोभित और शिखर का।

जीवेष्णा—(कविता)

जीवेष्णा कहां है तेरी जड़ें?
मैं उसे देखना चाहता हूं,
किन शिराओं से मिलता है
तुम्हें वो अविरल भोजन,
तू कहां छुपी रहती है,
किन अंधेरी गलियों से
और कैसे तू सरकती है
कैसे ढूंढती है अपना मार्ग
मार्ग ढूंढ कर सहने का देती है साहास
अनंत कष्ट जो असहनीय से दिखते थे पहले
परंतु तेरे पास आते ही सब सहते है चुप से
और घेर लेती है मेरे पूरे जीवन को
परंतु नहीं दिखते तेरे पद चाप
की ढूंढ सकूँ वो रहस्य
कैसे चुप से आ छा जाते है
जीवन महसूस होते तेरे पद-चाप,
न ही सुनाई देती है
तेरे पदों की ध्वनि ही,
पर तू न चलती दिखती है,
और चलाती है सर्वस्व को
मैं नित तोड़ता हूं तेरे सूखे पत्तों को
और झाड़ता रहता हूं घुल धमास
पर तू उगाती रहती है, नित नये अंकुर
और खिलाती है, कुछ रंगीन पुष्पों को

कितना चलूँ, और कहां चलूँ,
थक गया हूं चलते-चलते अब तो
न ही दिखती है कोई मंजिल
न ही कोई कारण दिखता चलने का
क्या मैं अकारण भटक रहा हूं?
इत-उत बहती किन्हीं लहरों के थपेड़ों के सहारे
एक सूखे पत्ते की तरह
खड़-खड़ाहट जिसमें बहुत है पर जीवन कहां
क्या कभी रुकना न होगा इस सफर का.....
जिस तरफ भी देखूँ शाह अँधेरा है,
नहीं दिखते अपने चलते पैर भी अब तो
कभी-कभी कोई जुगनू चमक उठता है मार्ग पर
और बंध जाती है क्षणिक ढांढ़स फिर चलने की
पर अब मुझे नहीं चलना बस रुकना है
न कोई इच्छा - न कोई तृष्णा
बाँध ही पायेगी मुझको फिर से.....
कर लिया है संकल्प मैंने।
ये मेरा अंतिम निर्णय है....देखना।
जीवेष्णा अब की बार तुम हारेगी।
ये मेरा अंतिम है सफर बनेगा
फिर मैं भी मिट जाऊंगा
की तुम मुझे चाह कर भी
नहीं दे पायेगी प्राण कोई
कण-कण बिखेर लूंगा अपने होने को
तब देखता हूं....
कैसे पहचानेगी तुम मुझे
न हो कोई इच्छा, न वासना
तब कहां करेगी तुम वास
देख लेना जीवेष्णा...तुम हारेगी इस बार।

हां ! हमने गांधी को मार दिया—(कविता)

हां !
हमने गांधी को मारा दिया
क्योंकि वह करता था आदर्श की बातें?
क्योंकि चला था वह सच्चाई-नैतिकता की राह पर
क्यों नहीं स्वीकार की उसकी दी हुई आजादी हमने,
शायद हम आजादी नहीं चाहते थे
चाहते थे स्वतंत्रता के नाम पर
एक अराजकता एक अव्यवस्था
जो आजादी आज हम ढो रहे है
वो नहीं है शहीद वीर सुपूतों
के सपनों की आजादी
बदला इस में कुछ भी नहीं है
बदले है केवल चेहरों के परोसना
जहां पहले पराये हुआ करते थे
आज अपने हमें हाँकते है
किसी भेड़ बकरियों की तरह
टकरा रहे है हम अपना सर
उन दीवारों से जो खड़ी की है
सफेद पौष उन पत्थर दिलों ने
चाहे वो न्यायालय की हो
या हो लोक सभा की
नहीं खुलते गरीबों के लिए उनके द्वार
क्योंकि नहीं है चाबी शायद अब हमारे पास
शायद हम लेना भूल गये है?

उस आजादी के तंग से मार्ग को
किनसे! कर रहे हो तुम उम्मीद
कुछ याद वो शाह काली रात
जब मार दिया था बापू को नहीं,
देश की नैतिकता को, हाय!
निकले थे वो शब्द
जो शायद सत्य थे, वो पुकार है
हे राम की...।
हमने मार दिया जरूर उन्हें
आजादी के गुरूर में
हम हो गये थे कितने कुरूप
और उस उन्माद में
हम चाबी लेना भूल गये किसी राम राज्य की
क्या कोई बता सकता है
यहां क्यों हमने मारा था गांधी को?
नहीं-नहीं हमने नहीं मारा गांधी को
हमने तो मारा है अपने भविष्य को
उस आदर्श रामराज्य के सपने को
और दे दी कुबेर की सोने की लंका
की पतवार उन रावणों वंशों के हाथों में
जो जलायेंगे देख लेना
जरूर एक दिन राम का ही पुतला
सकेंगे वोटों-कि-रोटी उन पर
जाति धर्म के बंटवारों के नाम से
मत पछताओ अब....
केवल हाथ मलो,
उस बंजारे की तरह,
जो उस मूक निरीह
उस कुते को मार कर

केवल पछताया
कलपा तड़पा था।
एक बेबस और लाचार की तरह।
पर नहीं आज भी है इक आस
नहीं होता सत्य का बीज कभी विनष्ट
बड़ी दयालु है प्रकृति छुपा लेती है
उसे अपने खामोश आंचल में
देखना एक दिन वह फिर से
समय और पीड़ा की धूप पा कर
बन जायेगा वह नवनीत पुष्प के रूप में फिर से
दूर दिखता है कोई प्रतिबिंब सा
बन एक नया द्वार सत्य का
जो आने वाले अंधकार में
फिर चमका है जुगनू बन कर
पर देखना हम चल पड़ेंगे उठ कर
फिर एक बार अपने ही कदमों से
तो ले जायेंगे इस भ्रष्टाचार के पार
मैं सुन पा रहा हूं,
वो दे रहा है पुकार...एक आवाहन।
उठो और ले लो हाथों में फिर पतवार
ओ माझी अब की बार चल देंगे पार
खोल दिये जग के आधार।।

मधु से सुंदर मधुमास

मधु से सुंदर मधुमास, प्रेम से सुंदर अहसास।
वो बन जाती है पूजा, जब तुम होते हो पास।
तुम दूर भी हो पर पास भी हो, बीती यादों का स्वप्न भी हो।
जीवन की मधुरम बेला में,बहती हुई वो श्वास भी हो।
आनंद के बहते झरने की, जो बुझ न सके प्यास भी हो।।
जिसे मिटा ने सके अब अंधियारा
वो सुबह होने की एक आस भी हो।
धुंधलका भी ले रहा था कई रंग-रूप।
किसी झिल मिल फैली छाया की तरह
वह बदल रहा था नित नये रंग-रूप
वो धरा भी कैसी हो गई सुनसान
नहीं बने पथ पर पद के कोई निशान।
पर पुकार रही थी कोई आभा उसकी
मधुर मस्त उर्जा का बन आवाहन
उसकी यहीं बात मुझे लुभा गई
खींच लिया उसने अपनी और
उसकी गहरी विशाल आंखों ने
मुझे बांध लिया सम्मोहित सा
कोई दूर पथिक है पुकार रहा
मेरे अंतस के द्वार खुले ,मैं खोया किन्हीं सपनों में। पल
पल क्षण में वो विस्मय हो गया ,तेरी पुकार एक मार्ग बनी
और रहा खुल और आंख खुली
अब क्या रुकना अब क्या चलना दोनों ही विलीन हुए।

भ्रम-चाप - (कविता)

एक निर्जन-वीरान,
अंत हीन सुना पथ,
जब मैं तुझ पर चलता हूं
सुनाई देते है पदचाप पीछे से
जैसे कर रहा है
मेरा पीछा कोई
या फिर मेरा अक्ष ही चल रहा है
बन हम सफर ही मेरे साथ

ये पद-चाप लिए हुए है भ्रम कोई
क्या ये है मेरा ही मन का कोई जाल
जो करना चाहता है
दिग्भ्रमित मुझको
इस डगर से परे
और दिख रहा है किसी सुनहरी डगर
कि देखो ये भी है कितना सुंदर

तुम भटक रहे हो ये मार्ग तुम्हारे लिए अंजान है
क्या ये है कोई राम मार्ग जिस पर चल रहे अनेक पथिक
परंतु गुरु का प्रेम उस की करुणा
जो दे रहा है सहारा और साहस
मुझे चलते जाने के लिए

नहीं तो शायद मैं
थक-हार कर रूक जाता
किसी भी अनजाने मोड़ पर

चाहे वो पद चाप लिए हुए है
भय अपने साथ मैं
परंतु चाहता हूं मैं वो चले मेरे साथ
एक सत्य की तरह
बांधे हुए है तेरी याद सी
मन में एक गांठ-गुदड़ी बन कर

जो शायद खुल जाये तो खाली है
और बंधी गांठ एक आशा
जो जला रहा है नन्हा सा एक दीपक
चमक रहा है दूर मेरे मार्ग पर
भटकन और ठोकर से
वो दे रहा है मुझ कुछ तो साहास
मार्ग का पथ प्रदर्शक बनकर।
एक निर्जन-वीरान,
अंत हीन सुना पथ,
अब मैं नहीं रुकूंगा
चाहे कुछ हो जाये।
थके या रुकें मेरी सांस
अब मैं नहीं रुकूंगा.... चरैवेति, चरैवेति

गति हीन—शून्य - (कविता)

हे-गति हीन शून्य,
तू ही है,
सब गति का स्त्रोत
यहीं है तेरी पूर्णता
जिसका न कोई आदि है
न है कोई अंत

और तू दे सकता है
सबको भिन्न-भिन्न रूप
और आकार-प्रकारों में,
तू है निराधार
पर है सबका आधार

गति हीन गति
ही है सत्य
एक चिर शाश्वत
जहां न कोई जन्म है
और न कोई अंत
इस लिए गति
तू ही जीवन है
और तू ही मृत्यु।

लूटने की आस है -   कविता

टुकड़ा मेरा यूं रूठ कर,
कुछ दूर रह गया।
मुझसे मेरे ऐ दोस्त
तू रूठ क्यों गया।

कहने लगा वो मन मेरा, एक घर की तलाश है।
जी रहे यूं संग वो मेरे, जैसे कोई जीवित लाश है।।
ढूंढते जिसे था उम्र भर फिर भी न मिल सका।
गिर-गिर के उठ गया हूं, देखो अब तो भी आस है।

कुछ ख्याल और ख्वाब गर्दिश में खो गये।
सब जिंदगी के सपने यूं पलकों पे सो गये।
लब न खुले और शब्द होठों पे रह गये।
वो चाँद-तारे राह के भी अँधेरों में खो गये।
भटकन बनी है राह की न कोई और-छोर है।
इस ताम भी रात में भी किसी सुबह की आस है।।

पूजा जिसे था उम्र भर वो बुत ही रह गया।
दिल था मेरा जो राह कि ज़र्रों में खो गया।
मत जाओ उस जगह वहां कोई बुत पदस्थ है।
वो खंडहर खड़े हुए है, वो कितने उदास है।
दूर कहे किसी को, जब ने कोई भी पास है।

कहां है मेरा वो घर जिसकी तलाश है।
ऐ जिंदगी तुम बस झूठी सी आस है।
तू छलती रही हमेशा से, वो कहां अब पास है।
जो बिछा रही तू जन्म-जन्म वो झूठी बिसात है।
दर्द के कोई पैबंद, अगर दे सके तो दे।
यूं तन्हा खड़े हुए है लूटने की आस है।

अहंकार और भय - (कविता)

अहंकार तू मूल है जीवन का,
तेरे सहारे ही ये जीवन का भवन खड़ा है
तू ही है मेरे होने का रहस्य
तुझसे ही तो मिलता है
पोषण उस भय रूपी जड़ों से
जो इन शिराओं में प्रस्फुटित हो रहा है
जो नित-नूतन होती है पल्लवित
पात-फूल में व फूल-फल रूप में
लेकिन तुझे भी सिमटना होता है,
एक दिन उस तमस शुष्क बीज में
पर तू वहां कहां रूक पाता है
उस तटी बंध को तोड़ कर
चल देता फिर एक दिन नवीन मार्ग पर
उस कठोर कैद हो कर तू स्वछंद
वह फिर चल देता है, किसी अंजान पथ पर
फिर लेता है नित नये रूप-रंग और आकार
पक्षियों के पंख, वायु का स्पंदन
अग्नि की तपिश, या शीत की ठिठुरन
में भी मैं देख रहा हूं, तेरे उन फैलते हाथों को
जो सर्व सब को आच्छादित किए है
वो सब तेरी धमनियों से बहकर ही तो निकलता है
दृश्य दृष्टा रूप बन कर, वो क्रोध का ही विस्तार है
और तेरी उन अंधेरी बंद जड़ों में है कहीं,
वह छुपा हुआ भय का रूप बन,

ये अंधकार ये अहंकार वहीं भय तो है भोजन,
इस अहंकार का,
धरातल पर जो जीवन है
क्रोध उसकी परिणति है,
लोटना होगा उस भय की और
तभी मिलेगा उसका दूसरा छोर
जो है अभय, शाश्वत, संपूर्ण,
तभी फैलेगी शांति इस जीवन में
अभय से पोषित फल का दूसरा नाम,
शांति, आनंद, महोत्सव है,
क्रोध, अहंकार, ईर्षा का मूल है—भय।
जो अभय-प्रेम की धूप में तोड़ देता है
अपना दम, तब वह हो जाता है दग्ध
फिर वो बीज बन जात है—नीरबीज।
और हो जाता है अति पूर्ण अगले ही पल,
नहीं फिर कोई मंजिल और न कोई मार्ग
न कहीं जाना और न आना।
थिरता—जो बन जाती है, उसका स्वभाव।
एक पूर्ण परिपूर्णता, और वही है समाधि।
और वही है इस रहस्यमय जीवन का समाधान।

दूज का चाँद — (कविता)

बैठा है दूज का चाँद आसमान पर
अपने ही घुटनों में
मुंह छिपाये किसी प्रेमिका कि तरह......।

जैसे रूठ कर के बैठ गई है छुई-मुई
किसी प्रेमिका सी
शायद वो भी चाहती है,
कोई छूकर करे उसका भी कर दे उद्धार
किसी अहल्या सा पुन: एक बार।।

आ जाये उसके भी जीवन में एक पूर्णिमा
जो भर दे प्रकाश उसके सर्व सब के पौर-पौर में
लेकिन मैं जानता हूं ऐसा होगा नहीं,

तेरा अधूरा झलकता मुखड़ा भी
एक घूँघट की और से देखता हुआ
लगता है कितना पूर्ण
और एक ये मनुष्य है

किसी पूर्ण से पूर्ण भी मुख पा कर
क्यों छाई रहती अतृप्त की धुंध,
हमेशा तेरे आस-पास आभामंडल पर
और तू मायूस बन कैसे बेचैन छिपाये रहता है
अपने को किसी भय या अहं पद पर्दा के पीछे

दूर क्षिति को वो चाँद आसमान पर
एक छुई मुई प्रेमिका की तरह
फिर भी तूं कितना पूर्ण लगता है
एक अधूरा मुख ले कर भी
उस मुखौटे के पीछे से दिखता है
उसका वह श्यामल रंग
जो झलकाता है उसके होने के भाव को
और हमारे वो परसोने जो चढ़ाये है
अपने मुख पर रंगदार मुखौटे कोई सोने का,
कोई चाँदी का
कोई पद का, कोई नाम का ये सब है
अहं के ही रूप
देखने में चाहे वो लगे सुंदर
फिर भी वे है बहुत कुरूप
क्योंकि वह थोथे है
उनमें दंभ भरा हुआ है
अहं और मद और पद की शराब में डूबे है
जिन्हें हमें रोज सजाना-रँगना पड़ता है
उन पर जमी धूल धमास को झाड़ना होता है
कही उनके पीछे असली रूप न झांक उठे।
और दिख जाये हमें हमारा होना.....रूप आकार।

दो में जल गया परवाना -- (कविता)

सब दुनिया ने त्याग दिया जब, मैं तो हो गया तेरा दीवाना।
चार मिल थे जीवन के दिन, दो तो मिल गये इसी धूल में।
दो में जल गया परवाना।
सब दुनिया ने त्याग दिया जब........।

बुलबुल रोये जब-जब बन में, मैं रो लूं इत मन ही मन में।
तपता जीवन, जलता ये आंगन, सुलग रहा ये मेरा तन मन।
कोई तो होगी ऐसी महफिल, जग कहता जिसको मयखाना।
इस दुनिया को त्याग दिया अब, बस हो गया मैं तेरा दिवाना।
चार मिल थे जीवन के दिन, दो तो मिल गये इसी धूल में।
दो में जल गया परवाना।

नाचे मयूर, झूमे अंबर, घट-घट के तू बसता अंदर।
कैसे ढूंढूँ बालू के कण, जीवन तो है अथाह समुद्र।
गीत छिपे है तारों में जो, उन्हें किन राग पर अब है गाना।
सब दुनिया को त्याग दिया जब, बस हो गया तेरा दिवाना।
चार मिल थे जीवन के दिन, दो तो मिल गये इसी धूल में।
दो में जल गया परवाना।

रात अंधेरी घिर आई फिर....कविता

रात अंधेरी घिर आई फिर,सुबह की कोई आस नहीं।
दूर कहें अब किसको अपना,कोई भी जब पास नहीं।

आती सांसे, जाती सांसे, बस ये भ्रम बना है जीने का।
दूर कहीं जब पपीहा गाता, वो दर्द उठा फिर सीने का।
प्यासे अधर-प्यासा जीवन, आँख के आंसू पीने को।
धड़क रहा है ये दिन मेरा, वही दर्द बसा अब सीने में।
सहने को हम सहते रहेंगे, चाहे तड़पन हमारे सान नहीं।

फिसलन मन की,
अकड़न तन की।
बन गया पतझड़ सारा जीवन।
नहीं सुलझती सुलझी उलझन।
प्रेम प्रीत का ये कैसा बंधन।

कहीं जल रहा ये तन मेरा, कहीं सुलगता ये मन है।
यूं ही पल-पल रोते-रोते जीवन खोते हम हर पल ।
हंसते है हम जब के आगे, मन-अंदर-अंदर रोता है।
आने का बस भ्रम बना है, तुमको कभी न आना है।

रात अंधेरी घिर आई फिर,सुबह की कोई आस नहीं।
दूर कहें अब किसको अपना,कोई भी जब पास नहीं।

साथी मिला है हमदम – (कविता)

साथी मिला है हमदम,
लुट लिया है तन मन।
दूर बुलाती मंजिल,
मुझे मेरे ऐ दिल......तू ले चल वहां।

1-पत्थर को पूजते रहे, पत्थर को सुझाते रहे।
पत्थर की नाव है मिली, पत्थर की मूर्ति सजी।
पत्थर के पंख पर उडू में कहां.....

2-तुमने पुकारा जब से, उलझन मिटी है मन से।
पैरो में पंख है लगे, जीवन में नाद है बजे।
जीवन को पल-पल मैं पी लूं यहां....साथी

3-जग से बेगाने हम हुए, जब से दिवाने तेरे हुए।
उड़ते है पंखों के बिना, उत्सव से भर गया जीना।
बता मुझे कहां ले उड़ा ले चला...साथी

चौराहा-बटवारे का (कविता)

चौराहे पर जलती थी एक लाल बत्ती
कैसे हंसती सी खिलखिलाती सी वह दिखती थी
कैसा शांत दिखाता था वहाँ सब कुछ घटता
आदर्श और सौम्य माहौल समेटे अपने में
वहां बसे हुए थे जैसे कायदे कानून
किस तरह सजाए हुए थे एक रुतबा
अपनी शान का प्रदर्शन कर रहे हो
न वहां अराजकता थी, न अफरातफरी
न कहीं धक्का मक्की,
न ही भागम-भाग, न ही था कोई हल्ला-गल्ला,
ये सब देख मन था कितना विस्मय एक अचरज
अरे गजब है यहां के संस्कार ऐसा क्यों था वहां?
परंतु सच बात कुछ और थी,
क्योंकि वहां पर खड़ा था एक सिपाही?
उसकी चाक चौबीस आंखें
निहार रही थी चारों और
फिर न जाने अचानक क्या हुआ
चारों तरफ फेल गई अराजकता
अफरातफरी-भगदड़
हो गई वहां कुछ गड़बड़
न जाने कहां आ गई वो आजादी
सब के मन में फैल गई आजादी की हवा
और अब चौराहे पर, बह रहा था खून वहशीपन
क्या नहीं था उस चौराहे पर जो पल भर पहले था

अब नहीं था किसी पर कोई जोर,
कोई नियम कानून ,
कुछ पल के लिए सब सो गये थे।
अंबर को एक गुरूर ने ढक लिया था
न अंबर नीला और न ही वह लाल दिख रहा था
क्योंकि लाखों रंगीन गुबारों न उसे घेर लिया था
कहने को वो आजादी थी
परंतु सच थी वो एक कुरूपता
और छा गये थे मार काट के काले बादल
बस एक ही रंग था जमीन आसमान पर
लाल खून का!
बस उन्हें खून चाहिए
चाहे वो किसी बच्चे का
या किसी मां बहन या बुर्जुग का
धर्म के नाम पर जग गया था
हमारा पाशविक पन
मैं सोच रहा था
क्या वो ही तो हमारा असली चेहरा था।
बाकी तो हमने चढ़ा रखे है
अपने-अपने चेहरों पर मुखौटे
जो हम अजान, आरती ओर सजदे
करते से दिखलाई देते थे,
वो बह गये पल में
ये पल भर का छपाया हुआ हमारा
छद्म आवरण का भ्रम टूट गया
एक खोखला छिलका
जो पल में उतर गया
और हम हो गये अंदर तक नंगे
देखो हम हो गये आजाद

ऐसे हमने मनाया आजादी का ऐसा जशन....
70 साल बाद भी जब में उस चौराहे पर जाता हूं
उसे उसी तरह की हवा में आज भी
मुझे करती दिखाई देती है वहीं चिताकर
मानो सब कुछ ठहर गया है वहां
एक पाशविक जाम में फंसा पाता हूं
बस उसमें बढ़ रही है कतार और लम्बी
पहले हम घरों को लुट रहे थे
अब लुट रहे है देश को
पहले हम धर्म के नाम पर
औरत की असम्मत से खेलते थे
और आज क्या? क्यों नोच रहे है,
आज भी उन अबलाओं का चीवर
आज भी हम गिद्ध बन निहारते है,
ऐसा क्यों क्या कोई बतलायेगा?
नहीं बतला सकते, क्योंकि हम सब वहीं है
केवल रिश्ते बदल लेते है
मौका परस्ती.... सब अपनी बारी के इंतजार में है
और देश को चलाने वाले
देश के सेवक...सफेद पोस नेता
खींच रहे है रोज नहीं लकीरें
कभी देश के नाम पर
कभी जाती के नाम पर
कभी भाषा के नाम पर
कभी राज्य के नाम पर
बस कोई बहाना चाहिए.....
जहां देखो वहीं अहिंसा
आगजनी, पत्थर बाजी
तोड़फोड़ मारकाट....भ्रष्टाचार

इसी आजादी के लिए हम लड़ रहे थे
क्या इसी आजादी के लिए
शहीदों ने फांसी को चूमा था
हंसते गाते गाते-गाते चढ़ चले थे।
''मेरा रंग दे वसंती...चोला''
जागो और झांको आपने अंदर
जगाओ आपने मरे हुए ज़मीर को
जो पैसे और पाप के तले दबा है
क्या इसी को तुम आजादी कहते हो?
तब नहीं चाहिए ऐसी आजादी
ये आजादी नहीं अराजकता है
निरंकुशता....
और तुम कहते हो स्वतंत्रता।
धिक्कार हे ऐसी स्वतंत्रता को
क्या वो परतंत्रता
नहीं भी इस आजादी से भली ?
कहीं अच्छी थी
इससे तो अपनी वो लाल बत्ती।
कोई खड़ा था चाक चौबंद सिपाही।

ये प्रेम प्रीत अनमोल रे — कविता

इस उम्र के ढलते मोड़ पर,ये प्रेम प्रीत अनमोल रे।
यह पूजा है, यहीं भक्ति है, ये आनंद है बे-तोल रे।

परम सुखद है जीवन उसका, जो इन तूफानों में डूबा।
न दर्पण है, न अर्पण है, ये रास्ता है जग से अबूझा।
थके कदम, थी राह कठिन, जीवन उर्जा ने उसे ढूंढा।
प्रेम प्रीत में वो शीतलता बसती,
इस किसी तराजू से न तोल रे।।

इस उम्र के ढलते मोड़ पर,ये प्रेम प्रीत अनमोल रे।
यह पूजा है, यहीं भक्ति है, ये आनंद है बे-तोल रे।

द्वार खुले जब मधुर नाद से, प्रेम की गागर पूरा भर गई।
सुप्त पड़ी थी प्रेम की गंगा, गो-मुख बन वो जीवित हो गई।
तुझे निहारूँ, तुझे पुकारूँ, तेरी आहट मेरी धड़कन बन गई।
जीवन में रंगोली बन तुम, जीवन को तुम पूरा रंग गई।
शब्द नहीं अब लब पर आते,
न किन्हीं गीत के बोल रे।।

इस उम्र के ढलते मोड़ पर,ये प्रेम प्रीत अनमोल रे।
यह पूजा है, यहीं भक्ति है, ये आनंद है बे-तोल रे।

सांसों का स्पन्दन तू बन गई, वीरानों को उपवन कर गई।
प्रेम-प्रीत की एक बूंद से, हृदय का सागर तुम भर गई।
मधुर बोल कोकिला बनकर, जीवन को गीतों सा रच गई।
पल-पल ऐसा जीवन हो गया, पैरो को तू मृदंग दे गई।
साज-साज पर, ताल-ताल पर,
राग बने अनमोल रे।

इस उम्र के ढलते मोड़ पर,ये प्रेम प्रीत अनमोल रे।
यह पूजा है, यहीं भक्ति है, ये आनंद है बे-तोल रे।

हठीला कैक्टस - (कविता)

कल जब मैंने पूछा
उस हठीले कटिलें व गर्वीले कैक्टस से
ये ज़हरीले कैक्टस तूं कहां से लाता है कांटे
अपने इस सुकोमल रसीले से तन पर
तुम कैसे करते हो निर्णय
फूल और कांटों के बनाने में
कैसे कर पाते हो
एक अदभुत संतुलन और विभेद
तुम फूल ओर कांटों में

तब वह कुछ चौंका
उसने मेरी और देखा
शायद उसने कुछ सोचा
और फिर यूं बोला
क्या है भेद इसमें
जो मांग है तुम्हारी
बस वहीं तो इति तुम हो कर्ता हाँ
तुम्हारी मांग की पूर्णता है।

देखो मुझे मैं नहीं होता कर्ता
बस देखता हूं इस सब होने को
मैं तो बस होता हूं मात्र वहां
कर्ता का पता नहीं है मुझे
बस होने की कला जान गया हूं

क्या तुम नहीं जानते?
तब तुम कैसे जी पाते हो?
दम नहीं घुटता होगा तुम्हारा
इस नीरस बेजान जीवन में
नित कर्ता बन-बन कर, थके नहीं अभी तक।

क्यों उठाते हो नित जीवन का भार
नाहक जमाने और संसार
कि दुख ओर चिंता को
छोड़ कर देखें जरा अपने आप को
उस अंजान के हाथों में एक बार

तब देखना एक दिन, जीवन क्या है।
तुम्हें आयेगा जीने का आनंद वो परम प्रसाद
तब बहोगे तुम श्रोता पति धारा में
कितनी सरसता-मधुरता
लिए होगा वह जीवन

देखना तुम्हारे चारों और
सब कुछ घटता रहेगा उसी तरह
पर कर्ता कोई और होगा, तुम हो मात्र साक्षी
इतने दिन नाहक बोझ ढो रहे थे कर्ता बनकर।
और नाहक भ्रम का जीवन जीये जा रहा थे......
कर्ता बन कर, अब साक्षी बनो।

तू चला चल - (कविता)

तू चला था जब डर पर
न मधुर था न सरल पथ
थी बड़ी विकट डगर भी।
किन क्षणों ने आन तुमने,
भर दिया था इक भरोसा,
हाथ पकड़ तूने कहा था
तू चला चल....तू चला चल।
तब मैं निडर-निष्कंप हो गया,
चल दिया पथ पर अकेला
देखते सब रह गये थे,
पागल मुझे सब कह रहे थे।
ये क्यों भटकना चाहता है?
गुम नाम पथ पर खो रहा है।
भर कर समर्पण, साहस मन में,
मैं चला मदमस्त होकर,
उस डगर को चूम, छू कर
होश के वो दो कदम भी,
जीवन में उन्माद भर गये,
एक टूटे साज में वो,
राग और मधु गान दे गये।
गंतव्य हीन भटकने से अच्छे ,
होश के वो दो कदम थे
ऐ मुसाफिर थकना नहीं अब
तू चला-चल तू चला चल........

सखी री सून प्रीतम रहा पुकार - (कविता)

सखी री सून प्रीतम रहा पुकार,
बोले एक मधुरम बोली।
हो ह्रदय के पार।
सखी री सुन प्रीतम रहा पुकार,
बोले ऐसी मीठी बोली,
हो ह्रदय के पार
सांसे भी अब करने लगी हे
ओशो-ओशो पुकार।

फूलवा ये मन, फूला उपवन।
फूल बन गया मेरा जोबन।
तुम सांसों में, तुम आंखों में,
तुझसे ही अब ये है जीवन।
याद तेरी इत चीर रही है,
तड़प उठा अब ये तन मन है।
राहे भी अब सजने लगी है,
उपवन भी है अब बेकरार।
न मैं झूठी तू झूठी,
ह्रदय करता सच्ची पुकार।....
सखी सून ओशो रहा पुकार।

कहां तक है, रिश्तों की दीवारें
कहां से होते ये पथ-सब न्यारे
झूठे है बंधन अब सारे

नहीं ताकते हम कोई सहारे
चलेंगे उस पथ बिंदु के सहारे
कितने न्यारे कितने प्यारे
मिटते बनते ये सपने सारे
गागर मेरी भरने को है
मधुर मिलन की बेला आई
दिल हो रहा है अब बेकार...
सखी सून ओशो रहा पुकार।

बन गये हम तो तेरे दुलारे
भर गये तुम दामन तो सारे
छोड़ी ये नैया, लहरों के सहारे
दूर वो प्रीतम कर रहा इशारे
प्रीत प्रेम की मधुर गान पर
पिऊ-पिऊ ह्रदय करे पुकार
जिस दिन से तुझे देखा प्रीतम
बैठे है दिल हार,
सखी सून ओशो रहा पुकार।

श्वास-श्वास मैं एक आस-आस है
वो क्षण-क्षण करती तेरी पुकार
जीवन धन्य उस दिन हो गया
तुझसे जुड़ गये थे जीवन तार
भीग रही हूं...इतराया जोबन
हाय बरस रहा नित तेरा प्यार
सखी री सून प्रीतम रहा पुकार,
बोले एक मधुरम बोली।
हो ह्रदय के पार.....सखी री सून ओशो रहा पुकार।

बस चलना ही है जीवन लक्ष्य

बस चलना ही है लक्ष्य मेरा
फिर तूफ़ानों से क्या डरना।
जब फूलो से झोली भर गई
अब कांटों से है क्यों लड़ना।

इस वीरान अनंत सुने पथ पर
जब निकल पड़े हम मोज लहर से।
तब क्यों डर कर, अब मुड़कर देखें
फिर क्यों पथ के इन कांटे से डरना।
जब फूलो से झोली भर गई ,
अब कांटों से है क्यों लड़ना।

है झूला रहा अम्बर नित दिन
आनंद की झोली है भर कर
जब मिटना हो अनंत लहर सा
तब वो नदिया हो, या हो सरिता
जब विलीन लहर है होना हमको
फिर अब खोने से भी क्या डरना।
जब फूलो से झोली भर गई ,
अब कांटों से है क्यों लड़ना।

है राग वहीं और सुर भी वहीं
पर तान बदलनी पड़ती है
उस आंगन के वो थिर जो कदम

अब झूम-झूम इठलाते है
जब राग बजा हो आनंद उत्सव
टेढ़े आँगन से है क्या डरना।
जब फूलो से झोली भर गई
अब कांटों से है क्यों लड़ना।

मन मोर मगन हो जाता है
मन मधुरस तान लगाता है
आलाप वही, है वही स्थाई
पर जीवन खरज़ बन जाते है
उन गहरे जाती बंदिश के
उस विकट राग से है क्यों डरना
बस चलना ही है लक्ष्य मेरा
फिर तूफ़ानों से क्या डरना।
जब फूलो से झोली भर गई
अब कांटों से है क्यों लड़ना।

टूट गया तू अपनी साख से — (कविता)

तू कैसे बन गया है अंजान,
तू बिछुड गया अपनी धूरी से
टूट गया तू अपनी साख से
कैसा कलरव था वो जीवन
अब उसको फिर से पहचान।

जो जाना था, जो वो चला गया
वो राग आलाप कैसे भूल गया
सब भूल गया इस झीने युग में
तुम इसमें ही आकर खो गया।
फिर तू भी इस जैसा हो गया।
तेरी चाहत, तेरा प्रेम कहां है
जो निर्जीव वस्तुओं में उलझ गया

जीवंत था जीवन के संग-संग
पर मरे से लगते है तेरे सब अंग
क्या मुरदों की नगरी में रहता
जीवंतता से नाता तोड़ लिया।
क्या कभी नहीं खोलेगा तू आंखें
नहीं पिघलेगा तेरा पत्थर ह्रदय।
फिर कैसे खिलेंगे कमल सागर में
प्रेम भरेगा कब गागर में
क्या फिर नहीं आयेगी कभी वो बेला?
क्या हटा सकेगा जीवन से अँधेरा

दूर खड़ा सवेरा तेरा करता
नित-नित इंतजार
मत घबरा अब आने को है
बस दूर नहीं वो देख किनारा
अंबर को अंतिम तार
डूब रहा कहीं दूर सितारा
अब न बैठ कहीं इक पलकों,
मत बंधना मन बंधन से
जो ढूंढ रहा है कोई सहारा
ताकता तुझको नित-नित वो द्वारा
क्यों व्योम-अंचल जीवन को हारा?
पार खड़ा कोई तुझे पुकारा
हृदय कि कलियां खोल कभी तो
देख भोर का उगा सितारा
कितना प्यारा
जग से न्यारा
चूमा जब से उन चरणों को
भाग्य उदय हो गया हमारा।

जब बरसता है माधुर्य तुम्हारा — (कविता)

जब बरसता है माधुर्य तुम्हारा
छलक़ता है भर-भर प्याला मेरा
तब झूम उठता है उपवन का पौर-पौर
गाने लगते है कोकिला का कंठ कोर-कोर

पर होती है उनमें तेरी ही—एक स्वर लहरी?
चाहे वह हो बादलों की गड़-गड़ाहट
उसका वो भय क्रांत गर्जन
दूर क्षितिज से गा उठती सी लगती है
राग कोई मधुर मेध-मल्हार सा

तब मेरा मन थिरक उठता है
छा जाता है एक नन्हा सा जादू
मेरे इन सूखे प्राणों में
बज उठती है मेरे हृदय वीणा की झंकार

दूर कहीं जब तूम खिल-खिलाते हो
किसी नन्हे बच्चे की हंसी बन कर
तब खुल जाते है कपाट हृदय के
और होता है श्रद्धा का अंकुरित बीज कोई

तब दूर कही से आकर के ह्रदय में मेरे
मधुमास बरसता है रस कि सुवास लिए
भर उठती है नासापुट में ठंडी-मीठी उसांस कोई
दम घुटने की बेचैन से डर जाता हूं
जो कंटक-कटीला सा दिखता था मार्ग कभी
कैसा सरस पथ बन कर बुला रहा है मुझे
था मार्ग कठिन वो, कंटक-बाधाओं से भरा
परन्तु अब उसमें सीतलता है डोल रही
लावण्य, प्रेम, और अल्हाद अमरत्व का अभिरस
उस पथ की अदृश्य अस्पर्श चाँदनी चूम रही
कैसी निश्चल सीतलता को है लिए हुए
दूर अदृश्य नयनों में झांक रहा उस पार कोई
तब लगता है कहीं दूर प्रिय कोई आयेगा
न मंजिल होगी और न होगा मार्ग कोई
तब मिट कर गरल मेरा बह जायेगा
एक घोर अंधकार फैलेगा नित रिस-रिस कर
पूर्ण कालिमा जीवन में भर जायेगी
शांत चमकती जलन कहीं से आयेगी
समेटे तृप्ति अपने आँचल में है लिए हुए।
और बंद हुई उन आंखें मैं
उस मां के आँचल की छांव कहीं पा जाओगे
जो ढक लेता है....
धुंधलके की लहरों की तरह।
तब पूर्ण हुए तुम अपने को पा जाओगे।

बीज — (कविता)

एक बीज दबा जब मिट्टी में
इक साध लिए एक आस लिए।
कोई दूर खड़ा एक मेध तुझे
इक उष्णता का एहसास लिए।

कल होगी यौवन की वर्षा फिर प्राणों में होगा संचार।
फूटेगी सुकोमल सी कलियां फैलेगा तृप्ति का संसार।

नीला अंबर जब नाचेगा और पहनेगा तारों का हार।
कोई दूर शिराओं, से आगे बैठा गायेगा मेध मल्हार।

फिर झूम उठेगा जग सारा और झूम उठेगा मेरा प्यार
मिटना ही जग की नियति है मिटना ही जीवन का आधार

इस घाट-बाट की रित यहीं जो मिटने को है तैयार।
मिटने में ही पूर्णता है,जो मिटा वो जग में हो गया पार।
वो तूफानों का कफन बाँध कर, जीवन ले गया पार।
मत घबरा और देख जरा, दूर तुझे भी प्रीतम रहा पुकार।

नयन तुम्हारे सबसे प्यारे — (कविता)

नयन तुम्हारे जग से न्यारे, तुम लगते प्रियतम सबसे प्यारे।
आस बनी अब धड़कन मेरी, कभी तो मिलेंगे हमें किनारे।

याद तुम्हारी जब-जब आई दामन में खुशियाँ भर लाई
मैं बैठी थी घाट किनारे, डूब गई तो सम्हल न पाई
तेरी याद में जग को छोड़ा, प्रेम प्रीत बन गई रुसवाई
पकड़-पकड़ कर अब हम हारे
छूट गये सब जो थे हमें प्यारे......

रोते-रोते ढल गई रैन, हुई भोर अब ना गा मन के बेना।
पल-पल कटता एक युग जैसा, नहीं मुझे इक पल भी चैन।
लोग पुकारे, जग दुतकारे, मौन शब्द अब किस को कहना।
इत काली रैन देह चिरती,
डूबो को अब कौन उबारे।
नयन तुम्हारे जग से न्यारे, तुम तो प्रियतम सबसे प्यारे।
आस बनी अब धड़कन मेरी, कभी तो मिलेंगे हमें किनारे।

एक प्रेम प्रीत कि पाती -- (कविता)

बहता जीवन पल-पल उत्सव
कल-कल बहता झरना बन।
कुछ मधुर राग किन्हीं छंदों में
कानों में आकर कर गुन-गुन।

देखो मेरे तुम उत्सव को
नित खेल खेलता अठखेली।
वह नहीं पकड़ता दीवारें
बह नहीं बाँधता बंधन बेड़ी।

नित रूप बदलता जाता है
जीवन के काल चक्र पर वो।
वह नहीं देखता मुड़कर कल
वह कहां सिमटना चाहता है।

किसी तट बंध की दीवारों में
जो उसको अविरल रोक सके।
वह मुक्त हास सा खिलता है
जीवन की पल-पल धारो में।

जो छवि बाँधती है हमको
बन परिचित के आकारों में।
वो बंधन कितना मधुर सही
फिर भी तो बंधन होते है।

अब पंख लगाकर उड़ना मुझको
किन्हीं अतल भरी गहराइयों में।
किसी अरूप छवि के पार कहीं
जो नित बनती और बिगड़ते है।

हम किसको अपना माने अब
यहां तो रुकना मृत्यु तुल्य है।
नित बहना जीवन जीवित है
मिटने दो रूप की छवियों को।

बस उस काल-गरल के ग्रभों में
वहां अविरल सा कुछ बहता है।
मैं रोक नहीं पाता उस को
नित वह छिटकता जाता है।

अब तुम देखो आँखों में मेरी।
कोई आस बंधी है सांस मेरी।
इस साध भरे इस जीवन का
कोई छू लूँ मूक रहस्य को।

प्राणों का स्पन्दन बन कर वो
इन दूर भटकते सपनों को।
एक प्रेम प्रीत की बाती बन कर
एक श्वेत धवल बादल कर दो।

कानों में मूक कोई शब्द दे दो
सूखे प्राणों में जीवन भर दो।
एक प्रीत प्यार की सरिता तुम
कल-कल कलरव का वो विहंगम।

उस शब्द गान का मौन करो
जो आकर मुझे जगा जाये।
स्वयं जो अपने पर आ जाये
वो खुद अपना ही हो जाये।
यही पूर्णता की कथा हमें
कोई कानों में नित कहता है।

कौन अँधेरा तुम्हें जगाता — (कविता)

कौन अँधेरा तुम्हें जगता,
कौन पपीहा तुम्हें बुलाता।
किन छंदो में तुम्हें बाँधता,
किन सप्तक में राग बजाता।

कहीं दूर तो है कोई पूर्ण,
नित मुझको जो आन लुभाता
गीत उठे जो भोर-बैल में,
पंछी के कंठों से गाता।

तपिश धूप की पीड़ा जीवन,
चुपके से आकर कह जाता।
रिमझिम की मधुरस बेला में,
सुने ह्रदय की प्यास बुझाता।

सांझ कहीं जब थके नीड़ पर,
कितना जिए नहीं बताता।
नहीं छुपोगे कितना छुप लो,
सभी और तो तुझे ही पाता।।

गीत विरह के जब कोई गाता
सून मन में एक आस जगाता
पद चापो के सून कर अब
मन में आनंद उत्सव भर जाता।